बड़े साहब

और अन्य कहानियां

सीताराम जैन



देवनागर प्रकाशन, जयपुर

बड़े साहब

क्रतिकार : सीताराम जैन

कृति : बड़े साहब | प्रथम संस्करण : 1987

प्रकाशक : देवनागर प्रकाशन, जयपुर | मूल्य : 25/-

मुद्रक : एलोरा प्रिण्टर्स, जयपुर

क्रम

□

1

अफसर

बस स्टेण्ड पर बस का इन्तजार करते करते काफी देर हो गई। साढ़े दस बज चुके थे किन्तु सुरेश को इस बात की कोई चिन्ता नहीं थी। वह कृषि विभाग के एक कार्यालय में कनिष्ट लिपिक के पद पर कार्य कर रहा था। कार्यालय का समय दस से पांच बजे तक का था। सुरेश जानता था कि आज वह काफी देर से ऑफिस पहुंचेगा किन्तु उसे इस बात की कोई परवाह नही थी। न वह कभी ऑफिस में वक्त पर पहुंचता था और न ही वक्त पर ऑफिस छोड़ता था। देर से ऑफिस जाना और जल्दी ही लौट आना उसकी आदत बन गई थी। ऑफिस में काम भी नहीं के बराबर करता था। या तो दिन भर दूसरे बाबुओं से वह गप्पें लड़ाता रहता या सीट पर ही सो जाता था। ऑफिस सरकारी न होकर जैसे उसके घर का था।

वह बस स्टेण्ड पर खड़ा सिगरेटें फूंकता रहा। उसके साथ ही उसका एक मित्र राजेश भी खड़ा था। राजेश ने कहा, 'बस का इन्तजार करते-करते इतनी देर हो गई, क्यो न हम टैक्सी ही करलें।'

'टैक्सी का किराया अधिक लगेगा।'

'तो क्या हुआ, तुम्हारा ऑफिस का टाइम भी तो हो चुका है न।'

'वह तो रोज ही होता है। सुरेश ने लापरवाही से कहा।

'तुम इतनी देर से ऑफिस पहुंचते हो, क्या तुम्हारे अफसर तुम्हें कभी कुछ नहीं कहते ?'

'कहे कौन ? अफसर तो खुद ही ऑफिस मे देर से आते है। न समय पर आते हैं और न ही समय पर जाते हैं। आकर भी सीट पर नहीं बैठते हैं। इससे हमारी भी मौज रहती है।'

सुरेश ने ठीक ही कहा था। जब राजा ही लापरवाह हो तो प्रजा की कौन कहे। आज का इन्सान यही देखता है कि दूसरा कोई जैसा करता है, वैसा ही वह भी करे। वह बुराइयों को जल्दी अपनाता है। भलाई की बातो की ओर तो जैसे उसका ध्यान ही नहीं जाता है। कितने आदमी ऐसे है जो यह सोचते हैं कि दूसरा चाहे कुछ भी करे, उन्हे तो यह देखना है कि उनका अपना फर्ज क्या है? उनका कर्त्तव्य क्या है, उन्हे सही मायने मे क्या करना चाहिए।

सुरेश जैसे नासमझ व्यक्तियों के कारण ही आज कर्मचारी वर्ग के प्रति आम व्यक्तियो की यही भावना है कि कर्मचारी ऑफिस मे काम ही क्या करते हैं, दिन भर कुर्सी तोड़ते हैं। काम कुछ करते नही हैं। किन्तु इस बात को भी नहीं भुला देना चाहिए कि चाहे जो भी हो, अन्त मे काम तो कर्मचारियों को ही करना पड़ता है। कोई काम समय पर नही होता है, तो विलम्ब से होता है किन्तु होता तो है ही।

सुरेश के ऑफिस की हालत कुछ ज्यादा ही बिगड़ी हुई थी जिसका समस्त उत्तरदायित्व उसके अफसर का था। अफसर ठीक हो, समय व काम का पाबन्द हो तो कोई कारण नही कि कर्मचारी लापरवाह हो जाएँ। अफसर ऑफिस मे समय पर न जाए आए, कामकाज को देखे नही, कौन क्या कर रहा है, क्या नही कर रहा है, कौन-सा काम वक्त पर हुआ या नहीं- जब तक वह यह न देखें तब तक कार्य चल ही कैसे सकता है।

अक्सर सभी सैक्शनो में कागजों का ढेर लगा हुआ था किन्तु जवाब जा ही नहीं पाते थे। तीन-तीन चार-चार रिमाइन्डर आ जाते किन्तु जवाब नदारद। कोई बहुत ही जरूरी हुआ और कार्यवाही करने की बात सिर पर ही आ पड़ी तो कार्यवाही हो गई अन्यथा कागज फाइलों मे दबे ही पड़े रहते थे।

बस आने पर सुरेश बस में बैठ गया। अब तक ग्याहर बज चुके थे। ऑफिस पहुंचते-पहुंचते साढ़े ग्यारह बजे गए। सबसे पहले सुरेश का सामना हैड क्लर्क से हुआ। हैड क्लर्क ने कहा- 'तुम्हे साहब ने याद किया था।'

'साहब आ गए ?' सुरेश ने आश्चर्य से पूछा।

'हां।'

सुरेश साहब के पास पहुंचा। वह नमस्ते कर खड़ा हो गया। साहब ने पूछा, 'आप अभी आए हैं?'

'हां', सर ! बस न मिलने के कारण थोड़ा लेट हो गया।'

'टाइम का ध्यान रखा करो। हैड ऑफिस से कारस्पान्डेन्स वाली फाइल भिजवादो।'

सुरेश ने साहब के कमरे से बाहर निकल कर मुंह बनाया। उसने अपनी सीट पर जाकर चपरासी के हाथ फाइल भेज दी।

सुरेश के साथी रामधन ने कहा, 'आज तो साहब के सामने पेशी हो गई न ?'

'काहे की पेशी', सुरेश ने लापरवाही से कहा, 'कोई खास बात नहीं थी।'

'क्या कहा था ?'

'बस, यही कि टाइम का ध्यान रखा करो। खुद तो जैसे बड़े टाइम के पाबन्द हैं।'

'साहब टाइम के पाबन्द नहीं है, यह हमारे हक में अच्छा ही है। अगर खुद टाइम पर आ जाएं तो हमें आराम से आने-जाने का मौका कैसे मिले। हमारी मौज कैसे हो।'

सुरेश का एक साथी दीनदयाल जो कि वैसे तो इन्हीं की श्रेणी का था किन्तु कभी कभी इनकी आलोचना भी कर बैठता था और समझदारी की बातें भी कह देता था। उसने हंस कर कहा, 'अरे, बेइमानों ! जिसका नमक खाते हो, उसकी नमक हलाली भी किया करो। दिन भर बदमाशी की बातों में ही लगे रहते हो। थोड़ा सरकारी काम भी किया करो।'

'काम तो तुम करते हो न', सुरेश ने जल कर कहा, 'तुम जल्दी ही अफसर बन जाओगे।'

'ऐसी अपनी तकदीर कहाँ है ?'

'सरकार के वफादार हो न।'

'वफादार तो क्या, फिर भी मैं सोचता हूं कि ऑफिस के निय का पालन तो करना ही चाहिए।'

'कहते तो तुम ठीक हो', रामघन ने कहा, 'किन्तु सच बात तो है कि पहली बात तो हमारे अफसर ही लापरवाह हैं जिसके कारण खुली छूट मिली हुई है। दूसरी बात यह भी है कि आज का कर्मचा वर्ग अभावग्रस्त है। कर्मचारियों को तन्ख्वाह ही कितनी सी मिलती है महगाई दिन-ब-दिन बढती जा रही है, तन्ख्वाह उसके हिसाब से बढ़ नही है। छोटे कर्मचारियों के पास न बगले होते हैं, न कारें होती है न ही बैंक बैलेंस होता है। अभावग्रस्त कर्मचारी करे तो क्या? इसलि वह अपने ही हाल में मस्त रहता है। और काम के प्रति रुचि न रखता है।'

'यह तो कोई बात नहीं हुई।' दीनदयाल ने कहा, 'सभी के पास बगले, कारें और बैंक बैलेन्स होता नहीं है। फिर व्यक्ति ऐसा उद्योग तो उसे यह सब भी मिल सकता है। इन्सान को बड़ा बना कर भगव नही भेजता है बल्कि वह स्वयं के अपने परिश्रम और लगन से बड़ा बन है। फिर भी मेरी मान्यता है कि इन्सान को अपना फर्ज याद रख चाहिए। अपना कर्त्तव्य नही चूकना चाहिए।'

'बस, बस,' सुरेश ने कहा। सुरेश ने कहा, 'अब यह लेक्चरबा बन्द करो। तुम अपनी ही कहो न! तुम कितना काम करते हो। कौन वक्त पर आते हो। दिन भर सीट पर सोते रहते हो। कागजों का लगा हुआ है। चले हो दूसरों को शिक्षा देने।'

दीनदयाल कुटिलता के साथ मुस्करा दिया। उसने कहा, 'किन्तु इन बातो को स्वीकार करता हूं, और अनुभव करता हूं, यही कम है?'

'किन्तु इन बातो को स्वीकार करने और अनुभव करने से ही काम नही हो जाता है। काम तो करने से ही होगा। उतना ही को करो, जितना कर सको।'

उसी दिन शाम को खबर मिली कि मौजूदा अफसर का ट्रांस्फर

गया है। ऑफिस के स्टाफ के ऊपर जैसे बम गिर पड़ा। सभी को इस आघात का दु ख हुआ। दु ख इस वजह से नही कि उनके अफसर अब चले जाएंगे बल्कि इस वजह से कि अब कहीं उनके मौज उड़ाने के दिन न चले जाएं। सुरेश और उसके साथियो के बीच इसी विषय पर चर्चा छिड़ गई। सुरेश ने कहा; 'यह तो बहुत अच्छा अफसर था, खूब मौज रहती थी इसके राज मे। अब न जाने कैसा अफसर आएगा।'

'भगवान ने चाहा तो अच्छा ही आएगा।' रामधन ने कहा।

दीनदयाल ने मुस्करा कर कहा, 'मुझे तो लगता है कि अब मौज उड़ाने के दिन गए। और कोई कठोर ही अफसर आएगा।'

'कठोर आकर हमारा क्या कर लेगा,' सुरेश ने कहा, 'देख लेंगे उसे भी।'

'लेकिन आ कौन रहा है ?' रामधन ने पूछा।

'झालावाड से श्री एस०पी० सक्सेना।' दीनदयाल ने उत्तर दिया।

दो ही दिन बाद श्री सक्सेना ने कार्यालय मे आकर ड्यूटी जोइन करली। पूर्व अफसर से चार्ज लेकर उन्हें कार्य मुक्त कर दिया गया। उन्हें स्टाफ ने भावभीनी विदाई दी। ड्यूटी जोइन करने के दूसरे ही दिन सक्सेनाजी ऑफिस टाइम से पांच मिनट पहले ही आ गए। उन्हे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि कार्यालय का कोई भी कर्मचारी ग्यारह बजे से पूर्व नही आता है। ज्यों-ज्यों कर्मचारी आते गए, त्यो त्यो वे उन्हें भविष्य में समय पर आने की चेतावनी देते गए।

अपनी आदत के मुताबिक सुरेश भी देर से आया था। उसे भी जल्दी आने की चेतावनी मिली।

उस दिन जब ऑफिस में बाहर से डाक आई तो सक्सेनाजी को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि उसमें अधिकांश रिमाइन्डर थे। उन्हें देखने से ज्ञात होता था कि इससे पहले भी तीन-तीन-चार-चार रिमाइन्डर आ चुके थे। हरएक रिमाइन्डर पर उन्होंने सम्बन्धित सैक्शन को रिमार्क दिया कि पत्र का उत्तर दो दिन के भीतर-भीतर अवश्य भेज दिया जाए।

सक्सेनाजी ने दिन भर मे दो-तीन बार कार्यालय का राउन्ड भी

लिया जिसमें उन्होंने कर्मचारियों को बातें करते या सोते हुए पाया जिसके लिए उन्होंने उन्हे मौखिक चेतावनी दी।

कार्यालय का इन्टरवल होने पर कर्मचारी पन्द्रह-पन्द्रह बीस-बीस मिनट देर से पहुंचे जिसके लिए भी चेतावनी दी गई।

कार्यालय की सम्पूर्ण व्यवस्था देख कर सक्सेनाजी का माथा ठनका। उन्होने देखा, कि यहा की व्यवस्था इतनी अधिक बिगड़ी हुई है कि कर्मचारियों के हरएक कार्य में शिकायत आती है और उन्हें कदम-कदम पर टोकना पड़ता है।

उसी दिन सक्सेना ने यह घोषणा करदी कि अगले दिन प्रत्येक कर्मचारी के कार्य का निरीक्षण किया जाएगा। इससे कर्मचारियो मे बड़ी खलबली मच गई। निरीक्षण की सूचना अचानक ही दी गई थी तथा उन्हें अपना कार्य सुधारने का जरा भी अवसर नही दिया गया था। इस सम्बन्ध मे कर्मचारियो ने हैड क्लर्क से बात की और उससे कहा कि वह साहब से कहें कि निरीक्षण पाच-सात दिन बाद किया जाए ताकि कर्मचारियों को कार्य को सुधारने का अवसर मिल सके। हैड क्लर्क ने इस सम्बन्ध में सक्सेनाजी से बात की तो सक्सेनाजी ने उन्हे डांट दिया और कहा, 'मैं तो मैं निरीक्षण करने से पूर्व इसकी सूचना देने के पक्ष में ही नहीं हूं दरअसल सही निरीक्षण तभी होता है जब किसी भी क्षण अचानक किया जाए। स्थिति का सही पता तभी चल सकता है। गनीमत समझो कि मैंने एक दिन पूर्व कह दिया।'

'सर,' हैड क्लर्क ने बड़ी नम्रता के साथ कहा, 'निरीक्षण के लिए पांच-सात दिन पूर्व का समय सभी बार दिया जाता है। आडीटर भी निरीक्षण की सूचना कुछ दिन पूर्व देते हैं।'

सक्सेनाजी ने कहा, 'मै अपना कार्य अपने ही तरीके से करता हूं आप अपनी सीट पर जाइये।'

अगले दिन भी प्रायः सभी कर्मचारी कार्यालय में लेट पहुंचे। जो भी पांच मिनट से अधिक देर से आये थे उन सभी को लिखित में चेतावनी दे दी गई। इससे कर्मचारियो मे खलबली मच गई।

सक्सेनाजी ने सभी कर्मचारियों के कार्य का निरीक्षण किया। निरीक्षण में उन्होंने पाया कि पेंडिंग कागजों का सभी संकसनों में ढेर पड़ा हुआ था। उस विषय में पूछने पर सभी ने इसकी वजह कार्य का अधिक होना बताया। सक्सेनाजी को इस बात पर विश्वास नहीं हुआ। वे समझ गए कि इस कार्यालय में आवश्यकता से अधिक पोल चल रही है।

उन्होंने सभी को लिखित में चेतावनी दे दी कि कार्यालय में आए सभी कागजों का उत्तर अधिक से अधिक सात दिन के भीतर अवश्य दे दिया जाए। और यदि इस सम्बन्ध में कोई कठिनाई आए तो कर्मचारी उनसे चर्चा करें। लापरवाही होने पर कार्यवाही की जाएगी।

सक्सेनाजी ने उसी दिन साथ चार बजे स्टाफ की एक मीटिंग का आयोजन किया। मीटिंग में उन्होंने कर्मचारियों को सम्बोधित कर कहा, 'मैंने आज के निरीक्षण में यह देखा है कि कोई भी कर्मचारी अपने कर्त्तव्य के प्रति सजग नहीं है। सभी का काम असन्तोषजनक है। कार्यालय में इतने अधिक रिमाइन्डरों का आना तो क्या, एक रिमाइन्डर का आना भी मैं दुर्भाग्यपूर्ण समझता हूं। आप लोग इतना याद रखिए कि मैं इस बात को कतई पसन्द नहीं करूंगा कि आज से सात दिन बाद कार्यालय में कभी कोई रिमाइण्डर आए। सात दिन का समय आपको इसलिए दिया जा रहा है ताकि आप इस बीच पेण्डिंग कार्य पूरा कर सकें। किसी भी कार्यालय को रिमाइण्डर देकर यह जाहिर किया जाता है कि कार्यालय में इतनी लापरवाही बरती जाती है कि बार-बार रिमाइण्डर देने पड़ते हैं। इस प्रकार एक ओर तो कार्यालय पर लापरवाही का आरोप लगाया जाता है दूसरी ओर पत्र भेजने वाले का समय, श्रम और धन का अपव्यय होता है और इन सब बातों का उत्तरदायित्व अफसर पर होता है। कार्यालय का स्टाफ कैसा कार्य करता है, कर्मचारी अपने कार्य के प्रति कितने सजग हैं, यह अफसर की कार्यकुशलता पर निर्भर करता है और मैं अपने कार्य के प्रति पूर्ण रूप से सजग हूं। अतः जाहिर है कि मैं यही चाहूंगा कि कर्मचारियों में भी

अपने कार्य के प्रति निष्ठा, लगन व सजगता उत्पन्न हो।"

कार्यालय का स्टॉफ चूंकि पहले से ही बिगड़ा हुआ था। कर्मचारियों ने मौज उड़ाने के सिवा कभी कुछ किया ही नहीं था। अत: जाहिर है कि उन्हें सक्सेनाजी की नीति पसन्द नहीं आई। एक प्रकार से वे उन्हें अपना दुश्मन समझने लगे और यही सोचते कि किसी प्रकार उनका ट्रांस्फर हो जाए तो अच्छा हो।

सक्सेनाजी ने भी स्टॉफ को सुधारने के लिए जैसे कमर ही कसली थी। कोई कर्मचारी पाच मिनट भी लेट आए या जरा भी किसी काम में गल्ती करे तो हाथों हाथ उसे लिखित में चेतावनी मिल जाती थी।

इसका नतीजा यह हुआ कि कार्यालय के कर्मचारियों में आतंक फैल गया। एक दिन सुरेश की उसके साथियों के साथ इसी विषय पर चर्चा छिड़ गई। उस दिन सक्सेनाजी सरकारी कार्यवश हैड ऑफिस गए थे।

सुरेश ने कहा, "हमारा आज तक का रेकार्ड बहुत अच्छा रहा है किन्तु मुझे लगता है कि अब हमारा रेकार्ड खराब हो जाएगा। पर्सनल फाइल चेतावनियों व स्पष्टीकरणों से भर जाएगी। तथा सी.आर. भी अवश्य ही खराब हो जाएगी।"

"तुम्हारा ख्याल बिल्कुल दुरुस्त है," दीनदयाल ने कहा, "सक्सेनाजी जब तक यहाँ रहेंगे, तब तक यही होता रहेगा।"

"किन्तु इसे रोकना भी मुश्किल नहीं है।" रामधन ने हंस कर कहा।

"वह कैसे ?," सुरेश ने उत्सुक होकर पूछा।

"अपना काम ठीक तरह करो," रामधन ने कहा, "शिकायत का मौका ही मत दो। इतना याद रखो कि कभी कोई अफसर बुरा नहीं होता है। वह कर्मचारियों से कार्य और अनुशासन चाहता है। यदि ये बातें सही हों तो बुरा अफसर भी हमारे लिए अच्छा हो सकता है।"

"यह तुमने ठीक कहा है," दीनदयाल ने कहा।

"किन्तु कभी-कभी गल्ती हो जाना भी स्वाभाविक है।" सुरेश ने

कहा," इसका मतलब यह तो नहीं कि ज़रा ज़रा-सी बातों के लिए कर्मचारियों का रेकार्ड ख़राब कर दिया जाए। आख़िर इन बातों का आगे चल कर अच्छा परिणाम नहीं निकलता है।"

दीनदयाल ने कहा, "किन्तु हम कर भी क्या सकते हैं। अपना कार्य ठीक करने और शिकायत का मौका न देने के सिवा हमारे पास कोई चारा नहीं है।"

सभी कर्मचारियों ने निश्चय किया कि साहब की तरह कार्यालय में वक्त से पांच मिनट पूर्व ही आ जाया करें तथा कार्य मेहनत व लगन से किया करें। इसमें उन लोगों को धीरे-धीरे सफलता भी मिलने लगी।

एक दिन सुरेश कारणवश दस मिनट देर से आया। उसे उसी समय सक्सेनाजी के सामने पेश होना पड़ा। सक्सेनाजी ने कहा, "मिस्टर सुरेश! तुम कई बार चेतावनी देने के बावजूद भी लेट आते हो। यदि तुम्हारी यही हालत रही तो मुझे तुम्हारे विरुद्ध कठोर अनुशासनात्मक कार्यवाही करने लिए बाध्य होना पड़ेगा। बहरहाल मैं यह नोट तुम्हारी सी. आर. में दे रहा हूं।"

सुरेश सक्सेनाजी से खफा तो पहले ही हो रहा था। सी. आर. में नोट देने की बात से उसे गुस्सा आ गया। उसने कहा, 'सर! आप मुझे बहुत परेशान करते हैं। मेरा रेकार्ड खराब करने से तो अच्छा है, कि आप मेरा ट्रांस्फर ही कर दें।"

'शट अप,' सक्सेनाजी चीख पड़े, 'तुम्हारी यह कहने की हिम्मत कैसे हुई। तुम यहां काम करते हो तो इसके बदले तुम्हें तनख्वाह मिलती है। तुम श्रमदान नहीं करते हो। और याद रखो, तुम्हारी इन्हीं हरकतों के कारण मैं तुम्हारा ट्रांस्फर कभी नहीं करूंगा। इससे पता नहीं, तुम्हारा तो कुछ बिगड़ेगा या नहीं किन्तु ट्रांस्फर से सरकारी कोश पर असर जरूर पड़ेगा। तुम्हें मुफ्त का टी. ए. देना पड़ेगा। मैं ऐसे ट्रांस्फरों के पक्ष में नहीं हूं। इन बातों से सरकार का अनावश्यक खर्चा हो जाता है। तुम्हें इसी ऑफिस में रह कर कार्य करना पड़ेगा। यदि तुमने कभी कोई बेअदबी की तो तुम्हारा रेकार्ड खराब किया ...

तुम्हें सस्पेण्ड भी किया जा सकता है और याद रखो, मैं तुम्हें नौकरी से भी हटा सकता हूं। तुम आज जिस बेअदबी से मेरे सामने पेश आए हो, इसके लिए तुम्हें जवाब देना होगा। जाओ अपनी सीट पर।"

सक्सेनाजी ने उसी समय हैड क्लर्क को बुला कर सुरेश के नाम स्पष्टीकरण देने के लिए पत्र तैयार करने का आदेश दे दिया।

कुछ ही देर में सुरेश को पत्र मिल गया। उससे उसी दिन कार्यालय छोड़ने से पूर्व उत्तर देने को कहा गया था।

सक्सेनाजी की नीतियों के कारण कार्यालय के स्टॉफ में धीरे-धीरे रोष व्याप्त होता जा रहा था। लोगों के दिल में सक्सेनाजी के प्रति नफरत पैदा हो गई।

सक्सेनाजी के आने से यहां एक ओर कर्मचारियों के रेकार्ड खराब हो रहे थे, वहां दूसरी ओर कर्मचारियों ने अपनी आदतों में सुधार भी कर लिया था। वे वक्त के पाबन्द होने लगे थे तथा इस बात की पूरी-पूरी चेष्टा करने लगे थे कि काम में कभी कोई शिकायत न रहे।

करीब छः माह बाद ही सक्सेनाजी के प्रमोशन के आदेश आ गए। इसके साथ ही उनका स्थानान्तरण भी हो गया। उनके स्टॉफ को उनके प्रमोशन के कारण तो नहीं बल्कि स्थानान्तरण के कारण खुशी जरूर हुई। सक्सेनाजी को विदाई पार्टी भी देनी थी किन्तु अधिकांश व्यक्ति इस पक्ष में नहीं थे कि एक खराब अफसर को विदाई पार्टी दी जाए किन्तु अन्त में यह तय हुआ कि विदाई पार्टी देनी चाहिए।

स्टॉफ द्वारा सक्सेनाजी को विदाई पार्टी न देने वाली बात उड़ती हुई उनके कानों तक भी पहुंच गई थी। उन्हें ज्ञात हुआ तो वे मुस्करा कर रह गए थे। वे यह जानते थे, कि वे जिस तरीके से कर्मचारियों से काम लेते थे, वह उन्हें पसन्द नहीं आता था और यही कारण था कि उनके प्रति उनके दिलों में नफरत पैदा हो गई थी। किन्तु उन्होंने इस बात की परवाह नहीं की।

विदाई पार्टी वाले दिन सभी कर्मचारी इकट्ठे हुए। चाय व नाश्ते का प्रोग्राम था। सक्सेनाजी अपनी बगल में एक मोटा-सा कागज़ों का

पुलन्दा दबाए आए। सभी ने खड़े होकर उन्हें झूठा ही सही, सम्मान दिया। सक्सेनाजी के बैठ जाने पर सभी बैठ गए। सक्सेनाजी ने एक-एक कर्मचारी की ओर मुस्करा कर देखा। फिर उन्होंने कहा, "मैं जानता हूं, कि आप लोग जो मुझे विदाई पार्टी दे रहे हैं, उससे आप खुश नहीं हैं। आप खुश केवल इस बात से हैं कि मेरा यहां से ट्रांस्फर हो रहा है। फिर भी जाते हुए व्यक्ति को विदाई पार्टी तो मिलनी ही चाहिए। आखिर मैं आप लोगों के साथ इतने दिन रहा हूं। फिर मैं प्रमोशन पाकर जा रहा हूं। आपको इसी बात से खुश होना चाहिए। किन्तु आप मुझसे नाराज हैं तो केवल यही सोच कर कि आपसे बार-बार जवाब तलब करके और आपको बार-बार चेतावनियां देकर मैंने आपका रेकार्ड खराब किया है। किन्तु याद रखिए, कभी कोई अफसर अपने स्टॉफ का दुश्मन नहीं होता है। उसे कर्मचारियों का रेकार्ड और उनकी सी.आर. खराब करने में मज़ा नहीं आता है। न इसमें उसका कोई व्यक्तिगत लाभ ही है। मैंने जो भी कुछ कार्यवाही की है, वह मात्र आप लोगों की आदतें सुधारने के लिए की है। केवल इसलिए नहीं कि आपका रेकार्ड खराब किया जाए। मैंने न तो किसी को सस्पेन्ड किया है, और न ही किसी का स्थानान्तरण किया है। स्थानान्तरणों के पक्ष में न तो कभी मैं रहा हूं और न ही कभी रहूंगा। इससे एक ओर तो कर्मचारी को परेशानी होती है, दूसरी ओर राजकीय कोष पर अनावश्यक भार पड़ता है। फिर ट्रांस्फर समस्या का समाधान भी नहीं है। इससे बुराई बढ़ती है, घटती नहीं है। काम असन्तोषजनक होने पर ट्रांस्फर किया जाए तो कर्मचारी निराशा व उत्साह भंग हो जाने के कारण आगे जाकर भी काम ठीक तरह नहीं करेगा। अतः उचित यही है कि कर्मचारी को हर स्थिति में उसी स्थान पर रख कर उसकी आदतों में सुधार किया जाए। उसके दिल में अपने कार्य के प्रति निष्ठा व कर्तव्यपरायणता उत्पन्न की जाए.... ।"

सुरेश सोच रहा था, कि पहले तो साहब ने लोगों का रेकार्ड खराब कर दिया और अब मीठे-मीठे बोल रहे हैं। वह मन ही मन उनके

उड़ाने लगा और इन्हें कोसने लगा।

सक्सेनाजी ने आगे कहा, "मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि मैंने यहां रह कर जो कुछ किया है, उसमें मुझे सफलता ही मिली है। धीरे-धीरे सभी व्यक्तियों की आदतें सुधरने लगी हैं और लोग अपना कार्य वक्त पर करने लगे हैं तथा शिकायतों के मौके भी नहीं के बराबर आने लगे हैं। अच्छा होता कि करीब चार-पांच माह बाद मेरा स्थानान्तरण हुआ होता ताकि मैं यहां की स्थिति कुछ और सुधार देता किन्तु कोई बात नहीं। मैं आप लोगों से यह आशा करूंगा कि आप स्वयं अपनी सूझबूझ से काम लेंगे और इस कमी को पूरा कर लेंगे।.........."

सक्सेनाजी ने कागजों के पुलन्दे को खोलते हुए आगे कहा, "मैं आप लोगों को एक बार फिर विश्वास दिला देना चाहता हूं कि आपका रेकार्ड खराब करने की मेरी चेष्टा कोई नहीं रही है। मेरे हाथ में ये सभी कागज आप लोगों से मांगे गए स्पष्टीकरणों व दी गई चेतावनियों की आफिस कापियां हैं जिन्हें मैंने आपकी पर्सनल फाइलों में नहीं जाने दिया है। चूंकि मेरा उद्देश्य सफल हो गया है अतः अब इनकी कोई आवश्यकता नहीं है।"

यह कह कर सक्सेनाजी ने स्वयं अपने हाथों से सभी कागज फाड़ कर टुकड़े-टुकड़े कर दिए। सभी कर्मचारी आश्चर्य से देखते रह गए। उनके दिल सक्सेनाजी के प्रति उद्‌गारों से भर आए। सक्सेनाजी ने हंस कर कहा, "क्यों भई, अब तो आप लोग खुश हो न?"

सभी व्यक्ति खामोश रहे। उनके कण्ठ अवरुद्ध हो गए। सक्सेनाजी ने कहा, "आप सभी इस बात का संकल्प लीजिए कि आप अपना कार्य सदा निष्ठा व ईमानदारी से करेंगे और अपने कार्य व व्यवहार से आगे आने वाले अधिकारियों को सन्तुष्ट रखेंगे।

सभी कर्मचारियों ने एक स्वर से सक्सेनाजी को आश्वासन दिया व प्रतिज्ञा की कि वे उनके द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलेंगे।

अगले दिन कर्मचारियों ने सक्सेनाजी को आंसुओं भरी विदाई दी।



2

ज्योतिष का चक्कर

"ज्योतिष के बारे में तुम्हारा क्या ख्याल है मिस्टर हीरालाल ?"

"क्या मतलब ?"

"मेरा मतलब है, क्या तुम ज्योतिष में विश्वास रखते हो ?"

"नहीं। कतई नहीं।"

"किन्तु कभी कभी ऐसा भी देखने में आया है कि ज्योतिषी जो बातें बताते हैं, वे सच हो जाती हैं।"

"यह भी तुमने एक ही कही, श्याम। ज्यादातर तो ऐसा देखने में आया है कि ज्योतिषी जो बातें बताते हैं वे झूठी होती हैं।"

'हां। ऐसा भी सुना है।'

"फिर तुम ही बताओ, ज्योतिष में कैसे विश्वास किया जा सकता है ? जब मैंने बी. ए. की परीक्षा दी थी, तब एक ज्योतिषी ने मुझसे कहा था कि मैं बी. ए. में फर्स्ट आऊंगा जबकि मैं सैकिण्ड आया था। बाद में मैंने उन ज्योतिषी जी को इस विषय में बताया तो उन्होंने कहा कि तुमने मेहनत अच्छी तरह नहीं की होगी। जब मैंने एम. ए. की परीक्षा दी तब एक दूसरे ज्योतिषी ने मुझे बताया था कि मैं फर्स्ट आऊंगा, जबकि मैं फैल हो गया था। अगली बार जब मैंने एम. ए. की परीक्षा दी, तब उन्हीं ज्योतिषी जी ने कहा, कि मैं सैकिण्ड आऊंगा। परिणाम निकलने पर यही हुआ। ऐसे उदाहरण कई दिए जा सकते हैं।

"माता-पिता शादी करने से पूर्व लड़के-लड़की की जन्म पत्री कई बार खूब अच्छी तरह मिलवाते हैं, और पूर्ण रूप से सन्तुष्ट होने के बाद ही शादी करते हैं। इसके बावजूद भी यह देखा गया है कि शादियां टूट जाती हैं या कई कारणों से लड़का-लड़की सुखी नहीं रह पाते हैं।"

"तुम्हारा कहना ठीक है।", श्याम ने स्वीकार किया।

हीरालाल ने कहा, 'इसलिए मैं तो यही मानता हूं कि किसी भी ज्योतिषी से किसी भी मामले में राय नहीं लेनी चाहिए। ज्योतिषी की बताई बात सही निकलना न निकलना संयोग मात्र है।'

'यह तो मैं भी मानता हूं।'

एक होटल में बैठा श्याम अपने मित्र हीरालाल के साथ ज्योतिष के विषय में बातें कर रहा था। बातचीत समाप्त होते-होते बैरे ने बिल लाकर रख दिया। श्याम ने बिल का भुगतान किया। फिर वह हीरालाल के साथ होटल से बाहर आ गया।

दोनों कुछ देर तो साथ-साथ बातें करते हुए चलते रहे। फिर हीरालाल किशनपोल दरवाजे की ओर मुड़ गया। श्याम अकेला आगे बढ़ा। उधर मानप्रकाश टाकीज के बाहर अक्सर दो-तीन ज्योतिषी अपना पोथी-पत्रा बिछाए बैठे रहते हैं और लोगों को उल्टी-सीधी बातें बता कर उनसे पैसे ऐंठ लेते हैं।

एक ज्योतिषी ने श्याम को पुकारा, 'ए बाबू। इधर आओ।'

श्याम ने पीछे मुड़ कर देखा। फिर उसके कदम उस ज्योतिषी की ओर बढ़ गए।

'क्या बात है?'

'तुम्हारा हाथ देखूं।'

'मुझे अपना हाथ-पैर नहीं दिखाना।'

श्याम चल दिया। ज्योतिषी ने पुकारा, 'सुनो बाबू।'

श्याम रुक गया। ज्योतिषी ने कहा, 'नाराज हो क्या?'

'नहीं तो नाराजगी की क्या बात है?'

'तो इधर आओ।'

'मैं ज्योतिष में विश्वास नहीं करता।'

'क्यों?'

'बस, यों ही। ज्योतिषी झूठी बातें बताते हैं।'

'आओ, मेरे पास बैठो।'

श्याम बैठ गया। ज्योतिषी ने कहा, 'मालूम होता है, भाज तक तुम्हारा ऐसे ज्योतिषियों से ही पाला पड़ा है जिनकी बातें झूठी साबित हुई हों। ज्योतिषी भी तीन प्रकार के होते हैं। पहले तो वे ज्योतिषी जो केवल भूतकाल की बातें बताते हैं भौर दूसरे वे जो भविष्य की बातें बताते हैं भौर तीसरे वे जो दोनों की बातें बताते हैं। अधिकतर ज्योतिषी भविष्य की उल्टी-सीधी ऐसी बातें बताते हैं, किसी के हित की होती है। ऐसा करके वे उस व्यक्ति से काफी भेंट वसूल कर लेते हैं।'

श्याम ज्योतिषी की बातों पर मन ही मन मुस्करा रहा था। उसने ज्योतिषी से पूछा, "आप भूतकाल की बातें बताते हैं या वर्तमान काल की?"

'मैं दोनों ही कालों की बातें बताता हूं।'

'अच्छा, तो पहले मुझे मेरे गुजरे हुए जीवन की बातें बताइये।'

'अपना हाथ दिखाओ।'

श्याम ने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया। ज्योतिषी ने हाथ देख कर पोथी-पत्रा देखा। फिर स्लेट पर कुछ हिसाब लगा कर कहा, 'बचपन में तुम किसी ऐसी बीमारी के शिकार हुए हो, जिसमें मरते-मरते बचे हो। घर वालों ने तो तुम्हारे जीने की उम्मीद ही छोड़ दी थी।'

'हां।'

'एक बार तुम पानी में डूब गए थे। फिर तुम्हारे किसी रिश्तेदार ने तुम्हें तुरन्त पानी में कूद कर निकाला था।'

'हां'

'तुम्हारे चार भाई भौर दो बहनें हैं?'

'हां'

'बीस वर्ष की आयु में तुम्हारा विवाह हो गया था।'

'हां'

'तुम्हारी पत्नी स्वभाव से बड़ी सीधी है।'

'हां'

'तुम्हारे दो लड़के भौर एक लड़की है।'

'हां'

'तुम एक प्राइवेट दफ्तर में मैनेजर हो।'

'हां।'

''मैंने कोई बात गलत तो नहीं बताई ?'

'नहीं।'

श्याम ने बड़ी प्रसन्नता के साथ कहा। उसे मन ही मन बड़ी खुशी हो रही थी।

'अब मुझे भविष्य के विषय में कुछ बताओ।'

कुछ देर की खामोशी के बाद ज्योतिषी ने कहा, 'तुम्हारे अब सिर्फ एक लड़का और होगा। चार महीने के भीतर भीतर तुम्हारी बहुत अच्छी तरक्की होगी। इस बीच तुम्हारी पत्नी का स्वास्थ्य काफी खराब रहेगा, किन्तु घबराने की कोई बात नही है। वह ठीक हो जाएगी।''''''''''अब आगे जो कुछ तुम पूछना चाहो, बताद्र ।'

श्याम ने मुस्कराते हुए कुछ देर सोच कर कहा, 'अब तो यह बताओ, कि मैं कब मरूंगा ?'

'यह भी बता सकता हूं' किन्तु इससे पूर्व तुम्हें मेरी कुछ बातों के उत्तर देने होंगे।'

'पूछो।'

'तुम्हारा नाम ?'

'घनश्यामदास।'

'अपनी जन्म तिथि बताओ।'

'25 जनवरी सन् 1935।'

'25 जनवरी को तुम किस वक्त पैदा हुए थे ? इस बात का सही जवाब देना। यदि मालूम न हो तो घर से मालूम करके बाद में बता देना।'

'मुझे अच्छी तरह याद है मैं 25 जनवरी को रात को ठीक 11 बज कर 45 मिनट पर पैदा हुआ था।'

ज्योतिषी ने कुछ देर हिसाब लगाया। पोथी-पत्रा देखा। फिर उसने कहा, 'कल तुम मुझसे शाम को सात बजे मिलो। मैं तुम्हें सही जवाब दे दूंगा।'

अगले दिन श्याम ज्योतिषी से फिर मिला। ज्योतिषी ने कुछ क्षण श्याम के मुंह की ओर एकटक देखने के बाद कहा, 'बाबू! तुमने मुझसे ऐसी बात पूछी है, जो आज तक किसी ने नहीं पूछी। मैंने मालूम तो कर लिया है, लेकिन अच्छा हो, तुम इस विषय में जानने की चेष्टा न करो।'

'नहीं,' श्याम ने दृढ़ता के साथ कहा, 'यदि तुमने मालूम कर लिया है तो बतादो।'

'मैं एक बार फिर कहता हूं, कि अपनी जिद् छोड़ दो। तुम्हारा भला इसी में है।'

श्याम को ज्योतिषी की बात अखरी। उसने कहा, 'अगर नहीं बता सकते तो साफ कहो।'

'ठीक है। अगर तुम हठ ही करते हो तो मैं बता देता हूं। तुम मंगलवार 5 जून सन् 1962 की रात को बारह बजे............'

जिस दिन श्याम की उसी ज्योतिषी से भेंट हुई थी, उस दिन तारीख 10-2-61 थी। और वार शुक्रवार था।

उस दिन के ठीक तो महीने बाद श्याम की पत्नी सरिता बीमार हो गई। सरिता की बीमारी दिन-ब-दिन बढ़ती गई। उसका इलाज बराबर चल रहा था। श्याम बीमारी में पैसा पानी की भांति बहा रहा था। कभी-कभी तो वह सरिता की हालत देख कर चिन्तित हो उठता था। किन्तु जब उसे ज्योतिषी की बात याद आ जाती तब उसे कुछ शान्ति मिलती।

श्याम की सेवा-सुश्रूषा से कुछ दिन बाद सरिता की तबीयत ठीक होने के आसार नजर आने लगे। यह देख कर श्याम को बड़ी प्रसन्नता हुई। अन्त में सरिता पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गई। इसके साथ ही श्याम का वेतन 450) रु० से बढ़ कर 500) रु० हो गया।

इस बीच सरिता गर्भवती हो चुकी थी। निश्चित समय पर उसने एक लड़के को जन्म दिया।

उस घटना के बाद एक वर्ष और दो महीने व्यतीत हो गए। श्याम अब तक ज्योतिषी की उस बात को भूल गया था। उसे इस विषय में कुछ भी याद नहीं था।

रात का वक्त था। लगभग 11 बज चुके थे। श्याम सरिता और चारों बच्चों के साथ कमरे में सोया हुआ था। आज वह सरिता के साथ देर तक बातें करता रहा था। सरिता की आंख लग चुकी थी। श्याम भी लाइट बन्द करके सोने की चेष्टा कर रहा था। वह देर तक करवटें बदलता रहा किन्तु न जाने क्यों उसे नींद नहीं आ रही थी।

सहसा श्याम को उस ज्योतिषी के साथ हुई बातों की याद आई। वह घबरा गया। मंगलवार पांच जून सन् 1962 की रात को बारह बजे—हां, यही था वह दिन जो ज्योतिषी के बताए अनुसार उसकी जिन्दगी का आखिरी दिन था। श्याम मन ही मन हंस पड़ा। कौन जाने, यह झूठ है या सच। तभी उसे ख्याल आया—ज्योतिषी ने उसकी बीती हुई जिन्दगी के विषय में जो बातें बताई थीं, वे सभी सच थीं। उसकी तीन भविष्य वाणियां सच हो चुकी थीं। अब एक ही बात रह गई थी। उसका क्या होगा ?

श्याम बुरी तरह घबराने लगा। उसने तुरन्त लाइट जलाई और कलैण्डर पर निगाह डाली–6 मई 1962। ओह, तो इसका मतलब यह हुआ कि अब उसकी जिन्दगी का एक माह ही शेष रह गया है।

श्याम परेशान हो उठा। उसने लाइट बन्द करदी। वह सोचता हुआ देर तक करवटें बदलता रहा। सोचते-सोचते ही न जाने कब उसकी आंख लग गई।

अब श्याम उस दिन को नहीं भूला, जो उसकी जिन्दगी का आखिरी दिन था। वह बराबर परेशान रहने लगा। वह हमेशा विचारों में खोया रहता, सोचता रहता—क्या मंगलवार, 5 जून सन् 1962 की रात को बारह बजे मैं सचमुच मर जाऊंगा ? क्या वाकई उस ज्योतिषी की बात सच होकर रहेगी ? लेकिन मैं मरना नहीं चाहता। मैं नहीं मरूंगा। तो फिर मुझे क्या करना चाहिए। क्या मौत से बचने का कोई उपाय नहीं ?

नहीं, मौत से कोई नहीं बच सकता। वक्त आने पर प्रत्येक व्यक्ति मरता है। उसे दुनियां की कोई शक्ति नहीं बचा सकती।

मैं मर जाऊंगा। मेरी पत्नी सरिता, मेरे बच्चे और मेरे परिवार वाले—सभी मेरे लिए रोयेंगे। सरिता और बच्चे किस कदर दुःखी होंगे। सरिता का सुहाग उजड़ जाएगा। वह बेवा हो जाएगी। मेरे बिना कैसे जिएगी। मेरे बच्चे जब मुझे याद करके रोयेंगे, तब वह उन्हें कैसे बहलाएगी, उनसे क्या कहेगी? बार-बार बच्चे मुझे याद करेंगे। सरिता से मेरे लिए पूछेंगे। सरिता रो पड़ेगी। मुझे याद करके आठ-आठ आंसू रोयेगी। सैंकड़ों आदमी जमा होंगे। मेरी अर्थी बंधेगी। लोग उसे कन्धे पर लाद कर श्मशान ले जाएंगे। उस वक्त कितना जोर से रोना-पीटना मचेगा।

श्मशान ले जाकर मुझे चिता पर लिटा दिया जाएगा। फिर आग लगादी जाएगी। यह मेरा शरीर, हाथ, पैर, सिर, सभी जल जाएंगे। आह, तब मैं क्या करूंगा? क्या मैं यह पीड़ा सहन कर सकूंगा? क्या मुझे कोई तकलीफ नहीं होगी? मैं पूर्ण रूप से जल चुकूंगा। फिर क्या होगा? मैं कहां जाऊंगा? मैं किस योनि में जन्म लूंगा? कुछ पता नहीं।

श्याम हमेशा इसी प्रकार की बातें सोच-सोच कर परेशान होता रहता। उसने पांच हजार का बीमा करवा रखा था। अपने परिवार की सुरक्षा के लिए तुरन्त ही उसने दस हजार का बीमा और करा दिया। इससे उसे कुछ शान्ति मिली। यदि वह मर भी गया, तो कम से कम उसके परिवार के लिए कुछ तो इन्तजाम हो जाएगा।

श्याम का किसी भी काम में मन नहीं लगता। वह दिन रात विचारों में खोया रहता। कभी-कभी वह यह भी सोचता, कि अच्छा होता, यदि वह उस ज्योतिषी से अपने मरने की बात ही न पूछता। किन्तु अब क्या हो सकता था?

श्याम खुद भी बेचैनी महसूस करता था। वह सोचता, कि वह उस बात को ही भूल जाए। ज्योतिषी ने जो बातें सच्ची बताई थी, वह इत्तफाक ही था। वह नहीं मरेगा। सब बकवास है।

उसने यह भी सोचा, कि वह अपना अधिकांश समय जासूसी उपन्यास पढने और अपनी पत्नी और बच्चों के साथ बातें करने में लगाए। किन्तु उपन्यास पढ़ते-पढ़ते भी उसे यह बात याद आ ही जाती और वह फिर चिन्ता में डूब जाता।

जब श्याम बच्चो के साथ खेल रहा होता और उस समय यदि उसे वह बात याद आ जाती, तो वह बड़े दुःख के साथ बच्चो की ओर देखता रहता और फिर उन्हे छाती से लगा कर भीच लेता और उनके गालो पर चुम्बनो की बौछार कर देता। कभी वह पागलों की तरह उनके हाथ चूमता, कभी पैर और कभी मुंह। इसके साथ ही उसकी आखो से आसू चू पड़ते।

यही बात सरिता के साथ भी होती। जब वह सरिता को प्यार कर रहा होता और उस समय उसे अपनी यह लीला समाप्त हो जाने की बात याद आ जाती तो वह उसे अपनी बाहुपाश में जकड़ लेता। इसके साथ ही उसकी आंखें गगा-यमुना बन जाती।

सरिता को यह देख कर बड़ा आश्चर्य होता। यो श्याम की हालत सरिता से छुपी हुई नही थी। वह भी जानती थी, कि श्याम में कुछ दिनों से एक बड़ा भारी परिवर्तन हो गया है। वह उसे परेशान देख कर उससे पूछती, 'आखिर आपको यह क्या हो गया है? आप इतने परेशान क्यो रहते है?'

श्याम टालने की चेष्टा करते हुए कहता, 'कुछ भी तो नही, सरिता। कुछ नही।'

''आप अवश्य ही मुझसे कुछ छिपाने की चेष्टा कर रहे है। कोई न कोई बात अवश्य है।'

'यह सब तुम्हारा भ्रम है।'

'आप झूठ बोल रहे हैं। कभी-कभी आप मेरी ओर बच्चो की ओर एकटक देखते रहते हैं। फिर हम से लिपट जाते हैं और खूब प्यार करते है। इसके साथ ही आपकी आंखों से आंसू बहने लगते है। आखिर इस बात का क्या मतलब है?'

श्याम टालने के लिए कह देता, 'कुछ भी तो नहीं। आजकल न जाने क्यों मुझे तुमसे और बच्चों से बेहद प्यार हो गया है। कभी-कभी मुझे तुम लोगों पर एकदम प्यार आ जाता है और मेरी आखों से प्रेमाश्रु फूट पड़ते हैं।'

'मैं यह मान सकती हूं, लेकिन आप जो परेशान रहते हैं, इसका क्या कारण है?'

'यह तुम्हारा भ्रम है। मैं भला क्यों परेशान रहूंगा। मुझे किस बात की कमी है। मेरे पत्नी है, चार बच्चे है। मैं पांच सौ रुपये माहवार कमाता हू।'

सरिता को कभी-कभी श्याम की बातों पर विश्वास हो भी जाता। लेकिन दिन-ब-दिन श्याम की मनोदशा बिगड़ती ही जा रही थी। सरिता सच्चाई जानने का भरसक प्रयत्न करती, किन्तु उसे सफलता नही मिलती। इससे वह भी परेशान रहने लगी। दरअसल श्याम उसे अपनी मौत की बात बताना नहीं चाहता था क्योंकि वह जानता था, कि अभी तो वही परेशान है, फिर तो सरिता भी परेशान हो जाएगी। तब कैसे काम चलेगा।

श्याम ने अब बड़ी सादगी से रहना आरम्भ कर दिया था। वह इस बात की पूरी चेष्टा करता था, कि कभी किसी से झगड़ा न हो। हो सकता है झगड़ा हो जाने पर कोई उस पर घातक प्रहार कर बैठे। श्याम कहीं भी स्कूटर पर जाने की बजाय पैदल ही जाता था। वह रास्ते में खूब देख कर चलता कि एक्सीडेण्ट न हो जाए। वह खाना भी हल्का ही खाता और इस बात की पूरी चेष्टा करता था, कि कहीं वह बीमार न हो जाए। उसने कई पौष्टिक पदार्थ खाने आरम्भ कर दिए। इसके बावजूद भी श्याम की परेशानी कम नहीं हुई। वह रात को भी देर तक अपनी मौत के विषय मे सोचता रहता और कभी-कभी सोई हुई सरिता और बच्चों से लिपट जाता। सरिता एकदम घबरा कर उठ बैठती और लाइट जला लेती। वह श्याम से बहुत पूछती किन्तु वह बातों ही बातों में टाल जाता।

काल के साथ-साथ समय गुजरता गया। शीघ्र ही ज्योतिषी का बताया हुआ दिन निकट आ गया। आज 4 जून थी। श्याम ने 4 और 5 की तारीख की छुट्टी ले ली। सरिता ने इसका कारण पूछा तो उसने कह दिया, कि दफ्तर जाने को उसका मूड़ नहीं है।

वह सारा दिन श्याम ने अपने सगे-सम्बन्धियों से मिलने में बिता दिया। उसने सोचा कि यदि वह मर भी जाए तो कम से कम उसे आखरी बार तो अपने सगे-सम्बन्धियों से मिल ही लेना चाहिए। वह ऐसे व्यक्तियों के पास भी गया, जिनसे उसे मिले काफी अर्सा हो गया था। वह ऐसे व्यक्तियो से भी मिला, जिनसे उसकी थोड़ी-बहुत अनबन थी। लोगों को बड़ा आश्चर्य होता था कि जो श्याम उनसे कई वर्षों से नहीं मिला, वह आज अचानक कैसे आ गया और वह भी बिना किसी कारण।

रहे-सहे व्यक्तियो से श्याम पांच जून को मिल आया। आज वह बेहद परेशान था। उसने दो-तीन डाक्टरों के नाम भी सोच लिए थे ताकि यदि वह अकस्मात बीमार पड़ जाए तो उन्हे बुलाया जा सके।

श्याम दिन भर सरिता और बच्चों के साथ ही बैठा रहा।

दिन खत्म हुआ रात आ गई। श्याम सरिता और चारो बच्चो के साथ एक कमरे में बैठ गया। उसने कमरे के दरवाजे और खिड़कियां सभी अच्छी तरह बन्द कर लिए ताकि यदि उसका कोई पुराना दुश्मन हो तो रात को उसकी हत्या करने न आ जाए।

श्याम ने उस दिन तीनो डाक्टरों के नाम सरिता को बता दिये और कहा, "सरिता ! आज अगर मुझे अकस्मात कुछ हो जाए, तो तुम इन डाक्टरो मे से जो भी कोई मिले, तुरन्त बुला लेना।"

'मेरी समझ मे नहीं आता। आखिर आपको क्या हो गया है', सरिता ने अधीर होकर पूछा।

'मुझे कुछ नहीं हुआ है। मैं तो बिल्कुल ठीक हूं।'

श्याम सरिता को बाहों में भींच कर उससे लिपट गया। सरिता ने उससे अलग होने का असफल प्रयास करते हुए कहा, 'मैं आपकी पत्नी हू

आखिर वह कौन-सी बात है जो आप मुझसे छिपा रहे हैं। अब मुझसे अधिक सहन नहीं होता। मेरी भूख-प्यास, आंखों की नींद सभी हराम हो गया है। आज मैं आपसे जान कर ही रहूंगी। आपको बताना ही होगा।

'लेकिन सरिता। ऐसी कोई·····'

सरिता रो पड़ी। उसने कहा, 'न जाने ऐसी क्या बात है, जो आप मुझसे छिपा रहे हैं। क्या आप यह चाहते हैं कि मैं परेशान हो-होकर मर जाऊं?·····'

'नहीं नहीं, सरिता' श्याम ने सहिता के मुंह पर हाथ रख दिया और कहा, 'ऐसा न कहो।'

'फिर आप क्यों नही बताते?'

'मैं तुम्हे बता कर परेशान करना नही चाहता।'

'आखिर ऐसी क्या बात है?'

'सरिता! तुमने इतने दिन तक सब्र किया है तो बस,' श्याम ने घड़ी की ओर देखा (दस बज चुके थे) और कहा, 'अब बस, दो घन्टे और इन्तजार करो। बारह बजे बाद तुम्हे सब कुछ आप ही मालूम हो जाएगा।'

श्याम ने सरिता को अपने पास और खींच लिया और चारों बच्चों को भी अपने पास बुला लिया। सरिता ने कहा, 'आपकी हरकतों से तो ऐसा लगता है, जैसे बारह बजे आपको हमसे कोई जुदा कर देगा, और आप ऐसा नही चाहते हैं।'

'नही, सरिता! ऐसी बात नहीं है। मुझे तुमसे कौन जुदा कर सकता है।'

सरिता ने वाकई ठीक कहा था, किन्तु श्याम हां कह कर उसे परेशानी में डालना नही चाहता था। लगता था, जैसे अब सरिता की सहनशीलता का बांध टूट गया हो। उसने कहा, 'फिर ऐसी क्या बात है, जिसे आप 12 बजे से पूर्व नहीं बता सकते?'

'बात ही ऐसी ही है, सरिता। बस, कुछ देर और इन्तजार करो। घड़ी की तरफ देखती रहो।'

श्याम और सरिता ने एक साथ दीवार घड़ी पर आंखें लगादीं। साढ़े ग्यारह बजते-बजते सरिता की पलकें बोझल होकर झुक गईं। किन्तु श्याम बराबर घड़ी की ओर देखता रहा। वह बार-बार सरिता और बच्चों पर हाथ फेर लेता था।

कुछ ही देर में अकस्मात उसकी पलकें झपक गईं।

सुबह छोटे बच्चे के रोने की आवाज सुन कर सरिता जाग गई। श्याम की आखें बन्द थी। सरिता ने उसे झकझोरा। श्याम ने हड़बड़ा कर आखें खोली। सरिता ने कहा, 'उठिए, सुबह हो गई।'

श्याम ने घड़ी की ओर देखा। सात बज चुके थे। उसने आश्चर्य से साथ कहा, 'सात बज गए। सुबह हो गई। सरिता! तुम....बच्चे, स मेरे साथ हो।'

श्याम ने पागलों की तरह उठ कर कमरे का दरवाजा और खिड़कियाँ खोली। फिर वह सरिता से लिपट गया। उसने कहा, 'मैं जिन्दा हूँ सरिता! मैं नही मरा। मौत का वक्त टल गया। ज्योतिषी की बात झूठी हो गई।'

सरिता के कुछ भी समझ मे नहीं आ रहा था। उसके पूछने प श्याम ने उसे सारी बातें सविस्तार बतादी। सरिता ने हंस कर कहा 'आप भी अजीब हैं। ज्योतिषी की बातों पर विश्वास कर बैठे।'

'विश्वास तो नही करता, सरिता! किन्तु उसने जो बातें बताई थीं, वे सभी सच साबित हुई थी। मेरी मौत की बात ही न जाने कैसे झूठी हो गई।'

'अगर आप इस विषय में मुझे पहले ही कह देते तो आपको इतनी परेशानी नही होती। एक महात्मा ने मुझ से कहा था कि आपको अस्सी वर्ष की उम्र तक कुछ नही होगा।'

'अब मैं ऐसी बातो मे कभी विश्वास नही करूंगा। 'सरिता श्याम ने कहा और सरिता को बाहों में भर लिया।

☐

3

ठोकर

'ग्राह, ग्राह''''उई दइया रे।''''''उई दइया'''' ''''ग्राह''''' सेठ तरुणमलजी की पत्नी प्रसव पीड़ा के कारण कराह रही थी। भीतर कमरे में दाई, दो-चार पड़ोस की स्त्रियां तथा नौकरानी उपस्थित थीं। सभी बच्चे को देखने के लिए उत्सुक थीं। बार-बार भगवान से यही प्रार्थना कर रही थीं कि हो तो पुत्र ही हो।

बाहर बैठे सेठजी भी भगवान से लड़के के लिए दुग्राएं माग रहे थे। वे बहुत प्रसन्न थे। ग्राज उनकी दुनियां में एक नया सूर्य उदय होने वाला था। वर्षों से किए गए उपवास, व्रत, दान-पुण्य, तीर्थ-यात्राएं आदि ग्राज फलीभूत होने वाले थे। इतने दिनों से की गई तपस्या का फल ग्राज मिलने वाला था। पर यह पता नहीं कि फल क्या मिलेगा ? सेठजी सोच रहे थे–लड़का मेरे बुढ़ापे की लकड़ी होगा। मैं उसके नाम पर हजारों दान-पुण्य कर डालूंगा और बाकी बची सम्पत्ति उसी के नाम करके उससे कहूंगा कि बेटा, यह सारी माया तुम्हारी ही है। तुम इसका ग्रच्छे कामों में, जैसे चाहो, उपयोग करो। तुम्हें कमाने-धमाने की आवश्यकता नहीं है। जीवन भर सुख से रहो, लेकिन ऐसे काम करो जिससे लोग तुम्हारा नाम ग्रादर से लें और खानदान की इज्जत ऊंची हो।

सेठजी इन्हीं विचारों में खोए हुए थे कि उन्हें किसी शिशु के रोने की ध्वनि सुनाई पड़ी। वे एकदम चौंक पड़े। तभी एक पड़ोसिन ने कमरे से बाहर ग्राकर हा, 'सेठजी! मुबारक हो! ग्राप लड़के के बाप बने हो।'

सेठजी के नौकर धम्मू ने बड़ी प्रसन्नता के साथ कहा, 'सेठजी, भी इस खुशी में कोई ग्रच्छी-सी ईनाम मिल जाए।'

सेठजी लड़के की खुशी मे क्या नहीं कर सकते थे। कोई कहता, तो शायद कलेजा भी निकाल कर दे देते। उन्होंने झट से हाथ पर से घड़ी उतार कर धन्नू को सौंप दी और कहा, 'ले, तू भी क्या याद रखेगा।'

सेठजी के हृदय में आनन्द हिलोरें ले रहा था। उनका जी चाहा, कि बच्चे को गोद में उठा लें, और जी भर कर प्यार करें। किन्तु बेचारे विवश थे। तभी कहीं दूर घंटाघर की घड़ी ने बारह बजाए। सेठजी उठ कर अपने कमरे मे चले गए और पलंग पर लेट गए। उनके मस्तिष्क मे अगले दिन के विचार उछलकूद मचा रहे थे। वे सोच रहे थे कि बच्चे का नाम अरुण रखूंगा और कल ही सगे सम्बन्धियों को एक शानदार दावत दूंगा। जब वे सुनेंगे कि सेठजी की बहू ने लड़के को जन्म दिया है तो वे कितने प्रसन्न होंगे। बच्चे के लिए एक से एक नये-नये उपहार लिए चले आएंगे। मेरे घर में कैसी रोनक हो जाएगी।

प्रातः काल सेठजी जल्दी ही उठे और नित्य कर्मों से निवृत्त होकर उन्होंने धन्नू को सगे-सम्बन्धियों को लड़का होने की शुभ सूचना देने भेज दिया। दोपहर होते-होते करीब करीब सभी सम्बन्धी आकर जमा हो गए। सभी बच्चे के लिए अच्छे-अच्छे उपहार लाए थे। स्त्रियाँ, दिन भर खुशी के गीत गाती रही। इस प्रकार सेठजी के घर मे चहल-पहल रही।

शाम को सेठजी ने एक दावत भी दी।

दिन बीत गए और अरुण 20 वर्ष का हो गया। इसी बीच सेठजी की पत्नी स्वर्ग सिधार गई थी। बड़ा होने पर दुर्भाग्यवश अरुण बुरी सोहबत में पड़ गया। गुण्डागर्दी करना, वेश्याओं के कोठो पर जाना और दिन-रात शराब पीना ही उसका काम था, जिससे पैसा पानी की तरह बह रहा था। उसकी फिजूल खर्ची के कारण तरुमामलजी बुरी तरह परेशान हो गए। पहले तो वे, जितना पैसा अरुण मागता, उतना देते गए किन्तु जब एक रोज उन्हें अरुण के कुकर्मों का पता चला तो वे बहुत दुःखी हुए और उन्होंने उसे पैसे देना बन्द कर दिया। अरुण ने इसकी जरा भी परवाह नही की। वह इधर-उधर चोरी करके या जेबें काट कर अपना काम बनाने लगा और एक दिन इन्ही कामों में वह पुलिस की पकड़ में आ गया। सेठजी पर इस बात का बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा।

जब दो साल की सजा के बाद अरुण जेल से रिहा होकर लौटा, तो सेठजी ने उसके पैरों में सिर टेक दिया और समझाया, कि "बेटा ! जो होना था, सो हो चुका। अब अपने खानदान की इज्जत अधिक खराब न करो। इस खानदान की ईज्जत रखना तुम्हारे ही हाथ में है। हमारी बहुत-कुछ इज्जत तो बिगड़ चुकी है। अब जो थोड़ी-बहुत रही है, उसे तो बनी रहने दो। आज से यह प्रण करलो कि अब तुम ऐसे बुरे काम कभी नहीं करोगे और अब भले आदमी बन कर रहोगे।"

अरुण के हृदय पर इन बातों का जरा भी प्रभाव नहीं पड़ा। उसने अपना वही रंग-ढंग रखा। जब चाहता, तब सेठजी उसे रुपये निकाल कर दे देते, क्योंकि वे जानते थे कि यदि रुपये न देंगे तो वह चोरी करेगा या किसी की जेबें काटेगा, या कही डाका मारेगा।

सेठजी अरुण को रुपये देते थे किन्तु उन्हे इस बात का दुःख बहुत होता था। रुपये देने का नही, बल्कि इस बात का कि वह उन्हे बुरे कामों मे खर्च करता था। जब अरुण पैदा हुआ था, तब सेठजी के पास पूरे दो लाख रुपये और इसके अतिरिक्त स्त्री का ढेर सारा जेवर मौजूद था। जिसमे 4–5 हजार तो अरुण के पैदा होने की खुशी मे खर्च हो गए थे और लगभग एक लाख रुपये अरुण को समय-समय पर देने मे खर्च हो गए थे। जब सेठजी ने उसे रुपये देना बन्द कर दिया था, तो उसने धीरे-धीरे अपनी मां का जेवर और 40–50 हजार रुपये चुरा कर अपना काम बना लिया था।

सेठजी ने बचे हुए रुपयों में से 20 हज़ार रुपये तो किसी प्रकार बचा कर अच्छी-सी जगह छुपा कर रख दिए थे।

सेठजी अरुण को हमेशा सीख देते किन्तु उसके ऊपर उनकी शिक्षाओं का कतई प्रभाव नहीं पड़ता। वह उनकी बातो को एक कान से सुन कर दूसरे से निकाल देता।

ऐसा देख कर सेठजी को बहुत दुःख होता। वे दिन-रात शोकसागर में डूबे रहते। इस प्रकार धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य गिरता गया।

एक दिन रात को बारह बजे सेठ तरुणमलजी कमरे में बिछे पलंग पर लेटे हुए अरुण के विषय में सोच रहे थे कि इस कम्बख्त को कैसे समझाऊं, इसने तो खानदान की इज्जत ही धूल में मिला दी। अब तो मैं कहीं मुंह दिखाने का नहीं रहा.........।

"पिताजी.............।"

सेठजी ने यह शब्द सुना, तो चौंक कर दरवाजे की ओर देखा। अरुण शराब के नशे में चूर देहरी पर खड़ा हुआ था। उसके हाथ में शराब से भरी बोतल थी। सिर से खून बह रहा था। शायद वह कहीं टकरा गया था।

"बेटा! तेरा यह हाल कैसे हो गया?" सेठजी को अरुण की ऐसी बुरी दशा पर रोना-सा आ गया। वे उसे गले से लगा कर उसके सिर का खून पोछने के लिए उसकी ओर बढ़े ही थे कि उसने जोर से कहा, "रुक जाओ वहीं। मुझे इस समय नारंगीबाई के यहां जाना है। जल्दी से नोट निकाल कर मेरे हवाले करदो........।"

"खबरदार," सेठजी ने गरज कर कहा, "अपने बाप के आगे ऐसे गन्दे शब्द बोलते हुए तुझे शर्म नहीं आती है........"

"खामोश," अरुण चिल्लाया, "कौन किसी का बाप और कौन किसी का बेटा! आज मैं बाईजी को यहीं लाऊंगा और उनके साथ.........जल्दी से रुपये निकालो ....।"

"नहीं, नहीं दूंगा।"

'मैं कहता हूं, जल्दी करो, वर्ना.........।'

'वर्ना? क्या तू जान से मार डालेगा?'

'हां हां हां हां.........।' अरुण ने गरजते हुए छुरा निकाल लिया और कहा, "अपनी जिन्दगी चाहते हो तो जल्दी से दो हजार रुपये मेरे आगे बढ़ा दो।'

'नहीं, तुझे एक पैसा भी नहीं दूंगा। अगर मुझे मारना चाहता है तो ले मार डाल।......... ताकि दुनिया, भी यह तमाशा देखे कि एक बेटे ने अपने बाप का खून कर दिया.........।'

सेठजी कहना तो बहुत कुछ चाहते थे किन्तु दूर अरुण ने उनके सिर पर शराब की बोतल दे मारी। उनके सिर से खून का फव्वारा बह चला। वे चीख कर गिर पड़े।

काफी देर बाद धीरे-धीरे अरुण का नशा उतरा। उसने पिताजी की ओर घूम कर देखा तो उसकी आंखें भीग गईं। वह तुरन्त ही उनके आगे नतमस्तक हो, माफी मांगने लगा, "मुझे माफ कर दीजिए, पिताजी! आज मुझ से बहुत बड़ा अनर्थ हो गया। मैं नशे मे था, पिताजी। नशे मे अपने आपको भी खो चुका था। उस समय मैं एक इन्सान नहीं, राक्षस था। मुझे माफ कर दीजिए। उस समय मैंने आपके सामने बोला था और न जाने मैंने आपको क्या-क्या अपशब्द कहे थे.........। मैं आपके पैरों पड़ता हूं, पिताजी! मेरे हृदय का दानव भाग चुका है। अब मैं बहुत जल्दी ही अच्छे काम करना शुरु कर दूंगा, पिताजी! अब मैं आपका ही कहना मानूंगा.......।"

सेठजी ने गदगद होकर अरुण को गले से लगा लिया और कहा, "बेटा, इस समय मैं तुमसे बहुत खुश हू। तुमने यह ढेर सारे आसू बहा कर अपने पापों को धो डाला। अब तुम्हारा कोई पाप शेष नही रहा। मेरी एक अन्तिम इच्छा थी, वह तुमने पूरी करदी। अब एक इच्छा और पूरी कर दो। पास वाले कमरे की खिड़की में एक डिब्बे में 20,000) रुपये के नोट पड़े हैं.......बेटा। उनसे तुम कोई कारोबार खोल कर बड़े-मजे से अपने दिन काटो। जब तुम पैदा हुए थे, उस वक्त मेरे पास लगभग दो लाख रुपये और तुम्हारी मा का ढेर सारा जेवर मौजूद था किन्तु अब केवल 20,000) रुपये ही रह गए। बाकी तुमने बरबाद कर दिए। नही तो मैंने सोचा था कि मेरे इकलौते लाड़ले बेटे को जीवन भर कमाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। खूब खाएगा-पियेगा और ऐश करेगा। तुम्हारा प्यारा मुंह देखने के लिए तुम्हारी मां और मैंने काफी कष्ट सहन किए थे। मुझे यह जान कर बेहद दुःख हो रहा है कि अब मेरे बेटे को जीवन भर कारोबार करना पड़ेगा.......।"

बोलते-बोलते सेठजी की जबान लड़-खड़ाने लगी, 'अब मैं·······बच नहीं सकता, बेटा·······मुझे मालूम था·······कि मेरे मरने पर······· जरूर तुम्हारे ठोकर लगेगी·······और तुम·······जरूर सम्भलोगे·······।"

अरुण फूट-फूट कर रो पड़ा और बोला, "मुझे माफ करदो, पिताजी। आपने मेरे लिए क्या-क्या किया था और मैंने उन सब को मिट्टी में मिला दिया। मैं कृतघ्न हूं, पिताजी! मुझे माफ करदो। मैं आपकी इच्छा जरूर पूरी करूंगा।"

सेठजी ने खुश होकर क्षमा का हाथ अरुण के सिर पर रखा और आशीर्वाद दिया कि तुम्हारा कारोबार फूले-फले और एक हिचकी में ही उनके प्राण-पखेरू उड़ गए। अरुण चीख कर उनके शव से लिपट गया और जिस रास्ते चलने के कारण उसके ठोकर लगी थी, उसे उस रास्ते में भूल कर भी कदम न रखने का उसने प्रण किया।

4

त्याग का मूल्य

खट ! खट !! खट !!!..........चकले के द्वारा उत्पन्न हुई खट-खट की ध्वनि ही कमरे के वातावरण में गूंज रही थी। वृद्ध सोना अपने पुत्रों में बार-बार आपसी कलह के कारण आंसू बहाती हुई खाना बनाने मे व्यस्त थी। अभी उसे ढेर सारी रोटियां बनानी थी। चूल्हा उसे अलग ही परेशान कर रहा था। कभी तेज हो जाता और कभी मन्द। तेज हो जाने पर यदि वह तवे को उतार कर नीचे रख देती (ठंडा करने के लिए) तो वह अधिक ठंडा हो जाता और सोना को उसे गर्म करने में फिर से चूल्हे को तेज करना पड़ता। वह कुछ बेचैन सी प्रतीत हो रही थी। उसका जी चाह रहा था कि खाना बनाने का कार्य छोड़ कर कुछ देर आराम करे, किन्तु वह विवश थी। उसका आंचल आंसुओं से भीग गया था। कमरे में एक ओर छोटा सा दीपक टिम-टिमा रहा था। उसी के प्रकाश में एक ओर मकड़ी रानी चुपचाप अपना जाल बुनने मे व्यस्त थी।

कुछ ही देर बाद दरवाजा खट-खटाने की ध्वनि सुनाई पड़ी। सोना एकदम चौंक पड़ी। उसने उठ कर दरवाजा खोला, तो उसके वृद्ध पति जगन्नाथजी ने लकड़ी खट-खटाते हुए भीतर प्रवेश किया। सोना चुपचाप चूल्हे के पास आ बैठी और फिर से रोटियां बनाने मे व्यस्त हो गई।

जगन्नाथजी कपड़े उतार कर खाना खाने बैठे। उन्होंने कुछ आश्चर्य के साथ पूछा, 'सोना। आज तुम्हारे मुख पर उदासी क्यों छा रही है? आज ऐसी क्या बात हो गई ?'

सोना पल भर के लिए चुप रही। फिर खाना बनाने का कार्य समाप्त करते हुए बोली, 'क्या बताऊं, मैं तो आपके लड़कों के आपसी कलहों से तंग आ गई हूं। जी चाहता है कि यह घर छोड़ कर कहीं चली जाऊं।'

जगन्नाथजी ने मुस्कराते हुए कहा, 'धुत पगली। जाएगी कहां? जाने के लिए जगह कहां.........।'

'यदि कहीं भी जगह नहीं मिलेगी, तो कुआ भाड़ तो कहीं नहीं चले गए हैं।' सोना ने आँसू गिराते हुए कहा।

जगन्नाथजी ने कहा, 'अच्छा अच्छा, छोड़ इन बातों को और वास्तविक बात बता।'

'क्या बताऊं, आप स्वय ही देख रहे हैं कि किस प्रकार आपके पुत्रों में मकान की कमी के कारण दिन रात कलह होते रहते हैं।' सोना ने कहा और आंचल से आंसू पोंछ डाले।

'कलह ठीक ही होते हैं। उन सभी की शादियां हो चुकी हैं, इसलिए अब उन्हें अधिक मकान की आवश्यकता पड़ना भी स्वाभाविक ही है। खैर इस विषय में भी सोचूं गा। और यदि इन झगड़ों को शीघ्र ही न सुलझाया गया, तो हो सकता है कि यह उग्र रूप धारण करलें।......... लाओ, खाना परोस दो। बड़ी जोर की भूख लगी है।' जगन्नाथ जी ने कहा।

सोना ने खाना परोस दिया और उठ कर भीतर कमरे में चलदी।

लगभग नौ बजे चारों भाई दूकान से लौटे। जगन्नाथजी उन्हें एकान्त में ले गए और प्रेम के साथ बोले, 'बेटा! तुम्हारे अन्दर यह आपसी कलह कब तक चलता रहेगा?'

बड़े पुत्र रामनाथ ने कहा, 'बापू! यह तो आप भी जानते हैं कि हम सभी की शादियां हो चुकी हैं अब हम सभी एक साथ नहीं रह सकते हैं। इसलिए जब तक हम सभी को अलग अलग कमरे नहीं मिल जाएंगे, यह आपसी कलह चलते ही रहेंगे और इस विषय में आप भी क्या कर सकते हैं। आपके पास और कमरे तो हैं नहीं जो आप हम सभी में बांट कर इन कलहों को मिटा सकें। अब आप केवल इतना ही कर सकते हैं कि कहीं जमीन खरीद कर हमारे लिए मकान बनवा दो। कलहों को मिटाने का यही सरल उपाय है।'

छोटा पुत्र बदरीनाथ जरा तेज दिमाग था। वह कुछ सोच कर तुरन्त ही बोल उठा, 'बापू ! अपने मकान के बराबर जो जमीन पड़ी है, वह किस दिन के लिए है ? क्यों न उसी का उपयोग किया जाए।'

तीनों भाई एक साथ बोल उठे, 'हां हां बापू ! बदरी बिलकुल ठीक कहता है। क्यों न उसी जमीन को काम में लिया जाए।'

जगन्नाथजी एक पल के लिए चुप रहे। फिर कुछ निराशा के साथ बोले, 'किन्तु बेटा ! यह सारी जमीन अपनी थोड़े ही है। केवल आधी ही है और आधी अपने पड़ोसी पांडेजी की है। वे अपनी जमीन कब देंगे ? यदि उनसे बिना पूछे मकान बनवाने की तैयारी की गई तो उनसे पीछा छुड़ाना मुश्किल हो जाएगा।'

'आप उनकी चिन्ता न करो, बापू ! वे हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगे।' रामनाथ ने कहा।

जगन्नाथजी ने कहा, 'नहीं बेटा ! फिर भी उनसे पूछ लेना ही उचित रहेगा।'

'तो क्या आप यह समझते हैं कि पूछने से वे स्वीकार कर लेंगे ?'

'भला अपनी चीज दूसरों को कौन देने लगा,' बदरीनाथ ने बीच ही में कहा। जगन्नाथजी ने समर्थन किया, 'हां बेटा ! यह तो तुम बिलकुल ठीक कहते हो। खैर तुम जैसा उचित समझो, करो।'

रामनाथ ने कहा, 'तो शीघ्र ही मकान बनवाने का कार्य आरम्भ करा दीजिए।'

'ठीक है।' जगन्नाथजी ने कहा।

मंगल या बुद्ध तक पांडेजी को किसी प्रकार पता लग गया कि जगन्नाथजी उनकी आधी जमीन को हड़प कर अपनी जमीन में मिला लेना चाहते हैं और एक मकान भी बनवाना चाहते हैं। वे तुरन्त ही क्रोध में भरे हुए, जगन्नाथजी के यहां गए और जोर जोर से दरवाजा खट-खटाते हुए पुकारने लगे, 'जगन्नाथजी ! ओ जगन्नाथजी ! ओ जगन्नाथजी !......'

रामनाथ ने गुस्से के साथ ऊपर से ही पूछा, 'क्या है ?'

'दरवाजा खोलो, अभी बताता हूं,' पांडेजी ने अड़बड़ाते हुए कहा।

रामनाथ ने आकर दरवाजा खोला, तब ही उसके तीनों भाई भी उसके पीछे-पीछे चले आए। पांडेयजी ने कहा, "देखो, मुझे ज्ञात हुआ है कि तुम लोग मेरी आधी जमीन को हड़प कर अपनी जमीन में मिलाना चाहते हो और एक मकान भी बनवाना चाहते हो.......?"

'जी हां आपको ठीक ही मालूम हुआ है,' रामनाथ ने कुटिलता के साथ कहा।

पांडेयजी उछल पड़े 'देखता हूं, तुम कैसे मकान बनवाते हो.......।

'आपके बाप का राज है जो नही बनवाने दोगे !.......जमीन तो सारी हमारी ही है। उसमें आपका हक ही क्या है ?' रामनाथ ने मुस्कराते हुए बीच ही में कहा।

अब तो पांडेयजी का खून उबल पड़ा। तुरन्त ही पाचो में तू-तू मैं-मैं हो गई। और इसी तू-तू मैं-मैं ने झगड़े का रूप धारण कर लिया। चारों भाइयों ने पांडेजी की खूब पिटाई की। उनके कई जगह बुरी तरह चोट आई। वे क्रोध के मारे केवल इतना ही कह कर चले गए, 'आज तुमने मुझे जो मारा है उसका बदला तुम से कल शाम को लिया जाएगा।'

रामनाथ ने समझ लिया कि पांडेजी कल अवश्य ही अपनी पार्टी को लेकर आएगे और बुरी तरह झगड़ा होगा। शायद हो सकता है कि लकड़ियां भी चल जाए।

दूसरे दिन रामनाथ ने अपनी पार्टी तैयार की। शाम को पांडेयजी अपनी 15–20 लठ धारी व्यक्तियों की पार्टी लेकर आए। क्रोध के मारे उनका मुख लाल था। उनका जी चाह रहा था कि चारो भाइयो को एक साथ ही समाप्त कर डाले।

रामनाथ की पार्टी में केवल 8–10 व्यक्ति ही थे। वह निराश नहीं हुआ और साहस कर अपनी छोटी सी सेना के साथ ही मैदान में आ डटा। उसकी पार्टी में जगन्नाथजी नहीं थे। वे किसी आवश्यक कार्य से बाजार गए हुए थे। उन्हें इस झगड़े के विषय मे कोई खबर भी नही थी।

झगड़ा आरम्भ होने ही वाला था कि सौभाग्यवश जगन्नाथजी बाजार से आ गए। दोनों ओर लठधारी पार्टियां देख कर वे आश्चर्य में पड़ गए। उन्होंने पाण्डेयजी से पूछा, 'पाण्डेयजी ! यह सब क्या हो रहा है ?'

पाण्डेयजी गुस्से के साथ बोले, 'बड़े भोले जान पड़ते हैं आप ! पूछते हैं कि यह सब क्या हो रहा है ? जैसे आपको कोई खबर ही न हो।....आपको मालूम नहीं, कल आपके बेटों ने मुझे कितना मारा था। उसी का जवाब मिल रहा है आज।'

जगन्नाथजी ने बड़े दीन भावों से कहा, सच पाण्डेयजी ! मुझे तो इस विषय में कोई खबर नहीं है।....मैं आपसे क्षमा चाहता हूं। आपके पैरों पड़ता हूं। आप उन्हें क्षमा कर दीजिए।

'क्षमा कर दीजिए....हूं। पहले आपके बेटों ने मुझे जो मारा था, उसका बदला ले लूं।' पाण्डेयजी ने रामनाथ की पार्टी के ऊपर लकड़ी से वार करते हुए कहा।

जगन्नाथजी ने तुरन्त ही लकड़ी को पकड़ लिया। वे समझ गए कि शायद लड़ाई जमीन की बात पर ही हुई है। उन्होंने अपनी पगड़ी उतार कर पाण्डेयजी के पैरों में रखते हुए कहा, 'क्षमा कीजिए, पाण्डेयजी ! मैं आपके पैरों पड़ता हूं और इन सभी व्यक्तियों के आगे कहता हूं कि यह सारी जमीन आपकी ही है। इसमें मेरा कोई हक नहीं है।....यदि कहें तो कागज पर लिख दूं ?'

पाण्डेयजी का क्रोध कुछ शान्त हुआ। वे प्रेम के साथ बोले, 'त्याग का मूल्य बहुत बड़ा होता है जगन्नाथजी ! यह सारी जमीन मेरी नहीं है। जितना इसमें मेरा हक है उतना ही आपका भी है। आपने अपनी जमीन भी मुझे देकर बहुत बड़ा त्याग किया है। मैं आपका ऋणी हूं। मुझे आपका ऋण चुकाना ही होगा। उसी के बदले में आपको यह सारी जमीन देता हूं। अब आप बड़े शौक से मकान बनवा सकते हैं। यदि आप मुझ से इस विषय में पहले ही बातचीत कर लेते तो मैं अवश्य ही अपनी जमीन आपको देना स्वीकार कर लेता। हम तुम अलग-अलग थोड़े ही हैं।'

◙

5

नया मोड़

'अरी ओ बदरी की मां ! बदरी की मा ! ओ बदरी की मां।'

'क्या है री, सुन रमुआ की दादी ? क्यों गला फाड़ रही है ?'

'देख, आज तेरे बदरी ने फिर रमुआ को मारा है। अब मुझसे ज्यादा सहन नहीं होगा। अपने बदरी को समझा लेना। आगे से उसने मेरे रमुआ की ओर आंख उठा कर भी देखा तो मैं उसकी आंखें निकाल लूंगी।'

'बड़ी आई, आंखें निकालने वाली। तेरे रमुआ ने उससे कुछ कहा होगा तभी तो उसने उसे मारा।'

'कहा क्या था, रमुआ बैठा हुआ खेल रहा था। तेरा बदरी उसे मार कर भाग गया। आगे से उसने मेरे बच्चे को हाथ भी लगाया तो ठीक नहीं होगा।'

रमुआ की दादी बड़बड़ाती हुई चली गई। बदरी की मां अभी अपने घर में प्रविष्ट हुई थी कि गांव का ही एक अन्य व्यक्ति अपने बच्चे के साथ आ धमका और बदरी की मां को आवाजें लगाने लगा।

'बदरी की मां ! ओ बदरी की मां !'

बदरी की मा भन-भनाती हुई बाहर आई, 'क्या है जी, मोहन के दादा।'

'देख बदरी की मां, आज तेरे बदरी ने पत्थर मार कर मोहन का सिर फोड़ दिया है।'

बदरी की मां उबल पड़ी, 'कभी कोई कहता है कि बदरी ने मेरे रमुआ को मारा है, कभी कोई कहता है, बदरी ने मेरे मोहन का सिर फोड़ दिया है। मेरा बदरी पागल हो गया है जो वह अकारण तुम्हारे

बच्चों को मारता है। तुम लोगों को भी शर्म नहीं आती, जो इस प्रकार अपने बच्चों की हिमायत करने चले आते हो। बच्चे तो सभी के एक से होते हैं। कौन-सा बच्चा ऐसा है जो शरारतें न करता हो।'

'बदरी की मां! तेरा यह कहना ठीक है, लेकिन हम यह सहन नहीं कर सकते कि कोई हमारे बच्चे का सिर फोड़ दे। यह तो नहीं कि अपने बदरी को बुला कर उसके कान खींचे और उसे समझाए, उल्टा हमको ही दोष देती हो।'

'मेरा बदरी तुम लोगों को बुरा लगता है तो एक दिन तुम ही उसे जहर देकर मार दो न।'

'हम ऐसे पापी नहीं हैं जो ऐसा करें। और सुन बदरी की मां! आज मैंने तेरे बदरी को कुछ नहीं कहा है। फिर कभी उसने मेरे बच्चे को मारा तो मुझ से बुरा कोई न होगा।'

मोहन के दादा चले गए।

'हूं, मुझ से बुरा कोई न होगा! जैसे हमें खा जाएगा। मेरा एक ही तो बेटा है। यही तो मेरा सहारा है और यही इनको बुरा लगता है।'

इसी प्रकार बड़बड़ाती हुई बदरी की मां भीतर चली गई और खाना बनाने बैठ गई।

कुछ देर बाद गांव का चौधरी आया।

'आज किधर से आ रहे हो, चौधरी काका?'

'खेत से लौट रहा हूं, बदरी की मां।'

'कैसे आना हुआ आज?'

'बदरी की मां! मैं तुझे पहले भी कई बार समझा चुका हूं और आज भी समझा रहा हूं। तू अपने बदरी को सम्हाल कर रख।'

'क्यों, उसने तुम्हारे भी बच्चे का सिर फोड़ दिया है क्या?'

'नहीं बदरी की मां! मैं तुझ से यह कह रहा था कि अपने बदरी को सुधार! वह दिन पर दिन बिगड़ता जा रहा है। अगर उसने इसी प्रकार गांव वालों को परेशान किया तो एक दिन सब गांव वाले मिल कर तुम दोनों को गांव से बाहर निकाल देंगे।'

'जैसे गांव वालों के बाप का राज है !'

'तू तो, बदरी की मां ! अपनी ही गाती है तेरा बदरी बिगड़ता जा रहा है और तू आंखें मूंदे बैठी है। तुझे जरा भी चिन्ता नहीं है। तू मां होकर भी अपने बच्चे के भले की नहीं सोचती। यह तो नहीं कि उसकी आदतें सुधारे।'

'उसकी आदतें तो सुधरी हुई ही हैं। कोई उसे छेड़ता होगा तभी तो वह किसी को कुछ कहता होगा।'

'अगर ऐसी बात ही होती तो तुझ से कोई कुछ कहता ही क्यों? तेरा लाड़-प्यार ही तो उसे बिगाड़ रहा है। एक सच्चे इन्सान की तरह मैं तो तुझे हमेशा सही राय दूंगा कि तू बदरी को प्यार से समझा और उसे स्कूल पढ़ने भेज ! आजकल अनपढ़ों की कोई कद्र नहीं होती। दो चार अक्षर सीख जाएगा तो किसी योग्य हो जाएगा।'

'पढ़ कर क्या करेगा, चौधरी काका ? उसके बाप की जमीन पड़ी है। मजे से खेती कर लेगा।'

'फिर भी पढ़ना जरूरी है, बदरी की मां ! और वह खेती भी तो तभी करेगा जब इस बारे में कुछ सीखेगा। तू उसे स्कूल भी भेज और मेरे साथ खेत पर भी भेजना शुरु करदे।'

'बदरी अभी बच्चा है, चौधरी काका ! धीरे-धीरे सब सीख जाएगा।'

'वह सोलह वर्ष का हो गया और तू उसे अभी बच्चा ही समझे बैठी है।'

'और नहीं तो क्या वह बूढ़ा हो गया है ?'

'तुझ से तो बदरी की मां, बात करना ही फिजूल है। तू कभी किसी का कहा नहीं मानती।'

इसी बीच बदरी आ गया।

'आ गया, बेटा बदरी ! कहां गया था ?'

'खेलने गया था, चौधरी काका।'

'बेटा, अब तू अच्छा आदमी बन। शरारतें छोड़ दे। कल से तू

रोजाना स्कूल जाया कर और मेरे साथ खेत पर भी काम सीखने चला कर।'

'तुम मुझे हमेशा इसी प्रकार परेशान करते रहते हो, चौधरी काका, तुम..........'

'मैं तो तेरे भले की ही कहता हूं, बदरी ! नहीं तो मुझे क्या, तू चाहे जो कर। तेरी मा का लाड़-प्यार ही तो तुझे बिगाड़ रहा है। तू इतना बड़ा हो गया है। तुझे अब तो सम्हलना चाहिए।'

बदरी ने गुस्सा होकर कहा, 'तुम चले जाओ, चौधरी काका'

'ठीक है, बेटा ! मैं तो चला जाता हू लेकिन याद रख, तूने अपने आपको नही सम्हाला तो एक दिन तुझे जरूर ठोकर खानी पड़ेगी।'

चौधरी वहां से उठ कर चला गया।

चौधरी का बदरी की मां से कोई रिश्ता नही था। वह तो इन्सानियत के नाते यों ही कभी-कभी आकर दोनों को समझा जाया करता था।

कभी-कभी इसी से चौधरी को दुत्कार-फटकार भी सुननी पड़ती किन्तु वह इस ओर ध्यान नही देता था। वह बदरी की मा और बदरी को खूब समझाता लेकिन उन्होने कभी उसकी बात नही मानी। गांव वाले बदरी से इतना तंग आ ग़ए कि कई बार तो उन लोगो ने दोनों को गांव से निकालने का ही निश्चय कर डाला था किन्तु चौधरी ने किसी प्रकार लोगो को समझा-बुझा कर मामला खत्म करवा दिया था।

बदरी की मां ने बदरी को सुधारने का कभी प्रयास ही नही किया। बदरी भी दिन-ब-दिन बिगड़ता ही गया।

कालचक्र के साथ-साथ बदरी की मां के दिन पूरे हुए और एक दिन वह भगवान को प्यारी हो गई।

मां की मृत्यु से बदरी के हृदय को भारी आघात पहुंचा।

मां के क्रिया-कर्म में सारा पैसा खत्म हो गया। अब तक मां ही गांव में छोटा-मोटा काम करके कुछ कमा लाती थी किन्तु अब तो बदरी को अपना गुजर चलाने के लिए इन्तजाम खुद ही करना था।

एक दिन चौधरी बदरी से मिलने गया। उस वक्त बदरी अपनी माँ की याद में आँसू बहा रहा था। चौधरी ने उसे आश्वासन देते हुए कहा, 'बेटा बदरी, रोने-धोने से कुछ नहीं होगा। अब अपने-आपको सम्हाल। मैं तुझे पहले ही समझाता था कि बेटा पढ़ा कर और मेरे साथ खेत पर भी काम सीखने चला कर लेकिन तूने कभी मेरा कहना नहीं माना। तेरी माँ ने भी तेरी ओर ध्यान नहीं दिया !............'

'हाँ, चौधरी काका !' बदरी ने सिसकते हुए कहा, 'मेरी माँ ही मेरी दुश्मन थी। उसके लाड़-प्यार ने ही मुझे बिगाड़ा है और मैंने भी कभी तुम्हारा कहा नहीं माना। अब माँ भी नहीं रही, चौधरी काका ! अब मेरा सहारा कौन होगा ?'

'तू जवान है, बदरी ! तू चाहे तो अब भी अपने-आपको सम्हाल सकता है। अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।'

'यह कैसे काका ?'

'तू यह क्यों भूलता है कि अभी तेरे बाप की जमीन पड़ी है। तू उसमें खेती कर सकता है।'

'लेकिन मैं तो खेती करना जानता ही नहीं।'

'तू मेरा कहा मानेगा तो सभी कुछ ठीक हो जाएगा, बदरी ! तू कुछ दिन मेरे खेत पर काम सीखने चल। फिर तू अपने खेत में काम शुरु कर देना। मैं और ग्राम सेवक, सभी तेरी पूरी मदद करेंगे। लेकिन सब काम तेरे परिश्रम से ही होगा। तू परिश्रम करेगा तो तेरा खेत सोना उगलेगा। इसके साथ ही पढ़ना भी शुरू करदे। तेरा पढ़ना भी बहुत जरूरी है।'

'लेकिन मैं तुम्हारे साथ काम सीखने चला करूंगा तो पढ़ाई कैसे करूंगा ?'

'रात्रि-पाठशाला में जाया कर। इसमें तुझे काफी फायदा होगा।'

बदरी ने दूसरे ही दिन से चौधरी के साथ खेत पर जाना और रात्रि को पाठशाला में पढ़ने जाना शुरू कर दिया।

कुछ दिन बाद बदरी ने अपने खेत में काम आरम्भ कर दिया।

चौधरी ने उसे बैलों के लिए रुपये भी उधार दे दिए। बदरी ने खेत जोत कर गेहूं बोया। इसमें चौधरी एवं ग्राम सेवक ने उसकी पूरी मदद की।

बदरी रोजाना खेत में आकर कठोर परिश्रम करता। वह थक जाता किन्तु इसकी परवाह न करता। तेज धूप पड़ती और वह अपना काम करता रहता। धीरे-धीरे बदरी की फसल पक कर तैयार हो गई।

एक दिन बदरी चौधरी से मिला। चौधरी ने कहा, 'देख बदरी, मैंने कहा न, कि तू परिश्रम करेगा तो तेरा खेत सोना उगलेगा। अब फसल पक कर तैयार हो गई है। इसकी कटाई आरम्भ करदे। और देख, गेहूं सहकारी समिति के द्वारा ही बेचना। इससे तुझे काफी फायदा होगा।'

'यह सब तुम्हारी ही कृपा का फल है, चौधरी काका! नहीं तो मैं किस योग्य था? तुमने ही मुझे इन्सान बनाया है। मैं तुम्हारा यह एहसान कभी नहीं भूलूंगा।'

'नहीं, बेटा! मैंने तेरे ऊपर कोई अहसान नहीं किया। मैंने तो अपना कर्तव्य पूरा किया है।'

बदरी ने मजदूरों की सहायता से अपनी फसल की कटाई की। फसल बहुत अच्छी हुई थी। उसने गेहूं सहकारी समिति के जरिए बेचे। इसमें उसे काफी फायदा हुआ।

आज बदरी बहुत प्रसन्न था। क्योंकि उसका जीवन एक नया मोड़ ले चुका था।



6

बड़े साहब

ट्रिन ट्रिन ट्रिन.......

टाइम पीस का अलार्म बज उठा।

करवट बदल कर अशोक बड़बड़ाया, 'उफ! यह घड़ी है या आफत। कम्बख्त ने सपने का सारा मजा ही किरकिरा कर दिया।'

और वह घड़ी का अलार्म बन्द करके चादर सिर तक तान कर पुनः सो गया। उसे आशा थी कि सपने का टूटा हुआ तार फिर जुड़ जाएगा।

अशोक की पत्नी आशा ने आकर चादर खींची और अशोक को झकझोरते हुए, कहा, 'अजी उठिए न। देखिए, नौ बज चुके हैं।'

अशोक बड़बड़ा कर उठ बैठा, 'यह क्या मुसीबत है, आशा! कभी यह घड़ी परेशान करती है तो कभी तुम। पहले इस कम्बख्त ने ऐसा प्यारा सपना चौपट कर दिया था, फिर अलार्म बन्द करके सपना देखने की कोशिश की तो तुम सिर पर आ धमकीं।'

अशोक फिर लेट गया। आशा ने चारपाई पर बैठते हुए कहा, 'आप हमेशा दिन में भी सपने देखा करते हैं।'

'लेकिन तुम्हें इससे क्या आपत्ति है? तुम जाकर अपना काम करो। मुझे सपना पूरा कर लेने दो।' अशोक ने चादर ओढ़ ली।

आशा हार मानने वाली नहीं थी। उसने चादर खींचते हुए कहा, 'मैंने कहा, नौ बज चुके हैं जनाब।'

'नौ बज चुके हैं तो क्या कयामत आ गई?'

'आज आफिस नहीं जाना है क्या?'

'अरी भागवान, अभी आफिस का टाइम कहां हुआ है?'

'आप तैयार होंगे तब तक हो जाएगा।'

आशा धीरे-धीरे अशोक के बालों में अंगुलियां फेरने लगी। अशोक ने अपना सिर उसकी गोद में रख दिया और कहा, 'तुम मेरे आफिस की चिन्ता मत करो। मुझे थोड़ी देर और सो लेने दो। आओ तुम भी सो जाओ।'

अशोक ने लेटे-लेते ही आशा को अपने पास खींच लिया। आशा ने अपने आपको छुड़ाने का प्रयत्न करते हुए कहा, 'आप बड़े वो हैं। खुद तो आलसी हैं सो हैं मेरे काम में और बाधा डाल रहे हैं। छोड़िए मुझे।'

अशोक ने उसे अपनी बाहों में समेट लिया और कहा, 'काम ही करना था तो यहां क्यों आई? अब बस, मैं तुम्हें नहीं जाने दूंगा। इसी तरह चुपचाप बैठी रहो, तो मेरा सपना पूरा हो जाएगा।' अशोक ने आंखें मूंद लीं। आशा ने कहा, 'मैं भी तो सुनूं, आज आप ऐसा कौन सा मधुर सपना देख रहे हैं।'

अशोक ने टोक कर कहा, 'बोलो मत। बस, खामोश बैठी रहो। जब सपना पूरा हो जाएगा, तब बताऊंगा।'

आशा ने उठने का प्रयास किया, 'अच्छा, श्रीमान्! आप सपना देखिए। मुझे मेरा काम बुला रहा है।'

अशोक ने आशा को छोड़ा नहीं। तभी निशू ने आवाज लगाई, 'ममी! ममी!'

आशा ने अशोक से कहा, 'जाने दीजिए न, निशू पुकार रहा है।'

अशोक फिर भी नहीं माना। मां को न आते देखकर निशू खुद ही वहां आ गया और कहने लगा, 'ममी, खाना दो न। स्कूल का टाइम हो गया।'

आशा एकदम उठ खड़ी हुई। निशू ने अशोक के पास आकर कहा, 'पापा अभी तक उठे नहीं? आफिस का समय हो गया।'

अशोक ने बच्चे की बात की ओर ध्यान नहीं दिया। आशा ने भी उसे उठाने की कोशिश की, लेकिन वह लेटा ही रहा।

निशू ने कहा, 'ममी! तुम खाना तैयार करो! मैं पापा को

जगाता हूं।'

निशू ने चारपाई पर चढ़ कर अशोक के कान में जोर से कहा, 'पापा ! साढे नौ बजे हैं, साढ़े नौ ! दफ्तर में डांट पड़ेगी।'

अशोक चौंक कर उठ बैठा, साढे नौ, अबे तो पहले क्यों नहीं बताया ?'

'मैं और मम्मी बराबर तो बता रहे हैं लेकिन आपने सुना ही कहां ? आप तो सो रहे थे।'

अशोक ने जल्दी-जल्दी तैयार होकर खाना खाया। तब तक साढ़े दस बज चुके थे। आशा ने कहा, 'आज देखना, साहब बहुत बिगड़ेंगे। आपको आफिस की जरा भी चिन्ता नहीं रहती।'

'कोई बात नहीं, आशा, अशोक ने लापरवाही से कहा, 'साहब बिगड़ेंगे तो मैं मना लूंगा।'

'आश्चर्य है कि आप रोजाना इसी तरह देर से जाते है लेकिन आपके साहब आपसे कुछ नही कहते। आशा ने उसे छाता देते हुए कहा !'

'हमारे साहब बहुत ही भले आदमी हैं, आशा ! वैसे टोकते तो है लेकिन मैं नित नया बहाना बना कर तैयार रखता हूं।'

'इसीलिए तो आप इतने लापरवाह हो गए।'

कुछ देर रुक कर आशा ने कहा, 'लेकिन मैं कहती हूं, आपको आफिस टाइम पर पहुंचना चाहिए ! आदमी के मिजाज का पता नहीं, कौन जाने किस दिन साहब नाराज हो जाएं।'

'हमारे साहब निहायत शरीफ और खुशमिजाज हैं। 'अशोक ने इत्मीनान से उत्तर दिया।

'तो इसका मतलब यह हुआ कि आप उनकी शराफत का नाजायज फायदा उठाएं ? कही ऐसा न हो, किसी दिन नौकरी खतरे में पड़ जाए।'

'तुम नाहक चिन्ता न करो।, 'कह कर अशोक निशू को साइकिल पर बैठा कर आफिस के लिए रवाना हो गया। रास्ते मे उसने निशू को स्कूल छोड़ दिया।

'जी हां, दस बजे का है ।'

साहब खामोश रहे । अशोक को लगा कि आज साहब का मूड बहुत खराब है । और दिनों तो साहब हंस कर बात टाल जाते थे, लेकिन आज वे असाधारण रूप से गम्भीर थे ।

बड़े साहब को खामोश देख कर अशोक डर गया । उसने कहा, 'आज ज्यादा देर हो गई, सर ।'

'यह कोई नई बात नहीं है ! देरी से तो आप रोज ही आते हैं । फर्क इतना-सा है कि आज ज्यादा देर से आए है ।'

'मैं माफी चाहता हूं, सर ।'

'आप रोज यही कहते है और मैं आपको माफ कर देता हूं । आप नौकरी को मजाक समझते हैं ।'

'ऐसी बात नहीं है, सर''''आज-आज और माफ कर दीजिए । कल से मैं ठीक समय पर आया करूंगा ।'

'यह तो आप रोज ही कहते है । और मैं कोई सख्त कार्यवाही नहीं करता, तो इसका मतलब यह तो नहीं कि आप इस नरमी का नाजायज फायदा उठाएं । आप जानते है, मेरी आदत ही नहीं है कि बात-बात मे मातहतो को डाटूं या उनके एक्स्प्लेनेशन काल करूं, वार्निंग दूं या चार्ज-शीट दूं, या सस्पेण्ड करदूं ।'

'आप बेहद मेहरबान हैं, सर....'

'आप लोग मेरी मेहरबानी का ही तो नाजायज फायदा उठाते हैं । आप जानते हैं, कि यह जमाना गरीबी और बेरोजगारी का है । इस तरह की बात मैं आप से पहले भी कई बार कह चुका हूं । मैं बड़ा अफसर हूं तो क्या हुआ, हूं तो आप ही की तरह इन्सान ! मैं जानता हू, कि अगर मैंने आज ही आपको नौकरी से अलग कर दिया तो आपकी क्या हालत होगी ?'

'आज-आज और माफ कर दीजिए, सर ।'

'हर बात की हद होती है, मिस्टर अशोक ! अफसर आंखें मूंदे रहे तो कहां तक ?'

'आज आखिरी बार माफ कर दीजिए, साहब !'

'मैं आपको कई बार मौका दे चुका हूं। आज मजबूरन मुझे आपको नौकरी से हटाने का आदेश लिखना पड़ा है।'

अशोक को लगा जैसे उसके पैरों तले से जमीन खिसकी जा रही है। उसने गिड़गिड़ाते हुए कहा, 'ऐसा मत कीजिए, सर ! बस, एक मौका और दे दीजिए ! मैं वायदा करता हूं, कि ऐसी गलती भविष्य में कभी नहीं होगी।'

'मैं मजबूर हूं।'

'मैं कहीं का नहीं रहूंगा, सर ! मुझे माफ कर दीजिए।'

'अब मैं आपकी मदद नहीं कर सकता, सॉरी।'

अशोक बहुत रोया-गिड़गिड़ाया किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। उसका दिल नहीं मान रहा था, कि साहब इतने कठोर हृदय के भी हो सकते हैं। किन्तु आज उसकी आशाओं के विपरीत ही हो रहा था।

अन्त में अशोक को निराश हो वहां से लौटना पड़ा।

अशोक भारी हृदय लिए घर लौटा। आशा ने उससे शीघ्र ही लौट आने और चिन्ता का कारण पूछा। अशोक ने सब बता दिया। आशा चिन्ता में डूब गई।

अशोक धम्म से चारपाई पर बैठ गया और बोला, 'मुझे क्या पता था कि आज साहब इतने गम्भीर, कठोर हो जाएंगे।'

'इसमें उनका दोष ही क्या है ? आप रोजाना देर से आते थे। कोई व्यक्ति कहां तक किसी के अपराधों को क्षमा करे।'

'तुम बिलकुल ठीक कहती हो, आशा ! सारा अपराध भी मेरा ही है।'

अशोक को शोकामग्न देख कर आशा ने उसके पास बैठते हुए कहा-'देखिए, ज्यादा चिन्तित मत होइये। मेरा दिल नहीं मानता है कि [illegible] साहब इतने कठोर भी हो सकते हैं। आप एक बार फिर से उनसे क्षमा मांगिए। शायद क्षमा करदें।'

'मैं पूरी कोशिश कर चुका हूँ, [illegible] साहब मुझे [illegible]

अब तो हमें आगे की सोचनी चाहिए।'

'आप एक बार कोशिश तो कर देखिए, नहीं तो कहीं और नौकरी खोजने के सिवा कोई चारा नहीं रह जाएगा।'

+ + +

अशोक अगले दिन ठीक दस बजे आफिस पहुँचा। उसने बड़े साहब से बहुत कहा, किन्तु वे उसे किसी भी हालत में वापस रखने को तैयार नहीं हुए।'

अशोक वहां से निराश लौट गया।

उसने कई जगह नौकरी तलाश की किन्तु नौकरी कहीं नहीं मिली। वह बहुत परेशान रहने लगा। ऊपर की किसी आय का तो कोई सहारा था नहीं। कर्जदारों का कर्ज भी धीरे-धीरे बढ़ने लगा। वे लोग आए दिन उसे परेशान करते। धीरे-धीरे एक महीना निकल गया। इस बीच अशोक ने नौकरी की खोज जारी रखी।

आर्थिक कठिनाई और नौकरी न मिलने के कारण अशोक की परेशानी दिन-ब-दिन बढ़ती गई। अब वह स्वभाव से भी चिड़चिड़ा हो चला था। जरा-जरा-सी बात पर कभी आशा को और कभी निशू को डांटता। अशोक के घर की स्थिति बहुत खराब हो चली थी।

+ + +

एक दिन सुबह अशोक आशा के साथ बैठा चाय पी रहा था। वे दोनों ही काफी परेशान थे। आशा ने कहा, 'पैसे के अभाव में दिन-ब-दिन परेशानी बढ़ती जा रही है। आपकी नौकरी कहीं लगी नहीं, और अभी पता नहीं कब तक नहीं लगेगी। कर्जदारों का कर्ज भी बढ़ता जा रहा है। निशू के स्कूल की फीस भी देनी है।....'

अशोक ने परेशान होकर बीच में कहा, 'तुम मुझे परेशान मत करो, आशा? मैं पहले ही काफी परेशान हूं। मैं और कर भी क्या सकता हूं!'

'यही तो मैं कहना चाहती थी,' आशा ने कहा, 'कि अगर आप कहें, मैं कुछ रुपये भेजने के लिए पिता जी को लिख दूं।'

'ऐसा मत करना, आशा,' अशोक ने इन्कार कर दिया, 'हम कब

तक उनसे रुपये लेते रहेंगे । इधर से कर्ज़ उतरेगा, तो उधर चढ़ जाएगा ।'

इसी बीच किसी ने दरवाजे पर दस्तक दी । अशोक ने उठ कर दरवाजा खोला तो उसे अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हुआ । उसके सामने बड़े साहब खड़े थे । उसने अभिवादन किया और कहा, 'आइये, सर !'

साहब भीतर आकर एक कुर्सी पर बैठ गए । अशोक चारपाई पर बैठ गया । साहब ने उसके चेहरे की ओर एकटक देखते हुए कहा, 'कहिए अशोक बाबू ! क्या हाल हैं ?'

अशोक को लगा, जैसे बड़े साहब जले पर नमक छिड़कने आए हैं । उसने कह दिया, 'ठीक ही है, क्या सेवा करूं ?'

'कुछ नहीं', बड़े साहब ने कहा, 'इधर से निकल रहा था । सोचा, आपसे मिलता चलूं ।'

तभी आशा भी आ गई । अशोक ने सभ्यता के नाते आशा से बड़े साहब के लिए चाय लाने को कहा॰ तो उन्होंने साफ इन्कार कर दिया । उन्होंने अशोक से पूछा, 'कहीं नौकरी मिली ?'

'जी नहीं ।'

साहब मुस्कराए । आशा ने बीच ही में कहा, 'जब से इनकी नौकरी गई है, तब से काफी परेशान रहने लगे हैं । क्योंकि नई नौकरी अभी तक नहीं मिली है और कर्जदारों का कर्ज भी दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है ।

'यह कोई नई बात नहीं हुई, श्रीमती अशोक', साहब ने कहा 'आजकल जिस किसी की नौकरी चली जाती है, उसका यही हाल होता है.........'

अशोक खामोश बैठा था । उसे लग रहा था कि साहब उसे जला का प्रयास कर रहे हैं । साहब ने आगे कहा, 'मैं अशोक बाबू को हमेश समझाता रहता था कि आफिस समय पर आया करें किन्तु ये अप आदत छोड़ना ही नहीं चाहते थे । मैं तो आज के इस बेकारी के जमा

से अच्छी तरह परिचित हूं। मैं इन्हे भी समझाया करता था कि एक बार नौकरी चली जाने पर मिलना मुश्किल हो जाएगा। लेकिन ये लापरवाह होते गए और एक दिन मजबूरन मुझे इन्हें नौकरी से हटाना पड़ा।'.........

अशोक मन ही मन बड़े साहब को कोस रहा था। वह सोच नहीं पा रहा था कि जब साहब इतनी सहानुभूति प्रकट कर रहे है, तब उन्होंने उसे नौकरी से हटाया ही क्यों? उसका जी चाहा, कि वह साहब से कह दे कि वे यहां से इसी वक्त चले जाएं। उसे उनकी सहानुभूति की कोई आवश्यकता नहीं है।

साहब ने अपना कथन जारी रखा, 'खैर, श्रीमती अशोक! जो हुआ, उसे भूल जाओ। अशोक बाबू की जगह अभी तक खाली पड़ी है। ये कल से ड्यूटी पर लौट सकते है।'

आशा और अशोक अवाक् रह गए। अशोक कठिनाई से कह पाया, 'यह आप क्या कह रहे हैं, सर?'

'मैं ठीक ही तो कह रहा हूं।' साहब ने मुस्कराते हुए कहा, 'उस दिन मैंने आपको नौकरी से हटा दिया था। इसका मुझे काफी खेद हुआ।'

'गलती तो मेरी ही थी, सर', अशोक ने कहा, 'आपकी उदारता और शराफत का मैंने हमेशा नाजायज फायदा उठाया है।'

साहब ने अशोक की बातों की ओर ध्यान न देते हुए कहा, 'मैंने उस समय चाहा था कि आपको माफ करदूं लेकिन फिर मैंने सोचा, इससे आपकी लापरवाही बढ़ जाएगी। आपको सबक मिलना ही चाहिए था।'

'आप वास्तव में बहुत दयालु हैं, सर। आप आदमी नहीं, देवता हैं।' अशोक का गला भर आया।

□

7

बुराई का बदला

'रामू काका, आज इतनी जल्दी जल्दी कहां जा रहे हो ?'

'स्टेशन जा रहा हू, बंसी । गाड़ी के आने का वक्त हो गया ।'

'क्यों, कहीं बाहर जाना है क्या ?'

'नहीं, आज मेरा बेटा श्यामू शहर से आ रहा है । आजकल शहर के किसी दफ्तर में बाबू हो गया है ।'

बंसी मुड़ कर साथ हो लिया और बोला, 'मैं खेत में जा रहा था, पर अब तुम्हारे साथ स्टेशन तक चलूंगा । चलो, श्यामू से मिल लूंगा ।'

दोनों स्टेशन पहुंचे । कुछ ही देर बाद गाड़ी आ गई । श्याम गाड़ी से उतर कर दोनों से मिला । फिर तीनों बातें करते हुए गांव की ओर पैदल ही चल दिए । रास्ते में एक ओर मुड़ते हुए बंसी बोला, 'अच्छा, रामू काका । मैं अभी तो खेत पर जा रहा हूं । लौट कर रात को फिर मिलूंगा ।'

बंसी खेत की ओर चल दिया ।

रात को बंसी खेत से लौटने पर रामू के यहां पहुंचा । रामू खाट पर बैठा हुक्का गुड़-गुड़ाता हुआ श्याम से शहर के विषय में बातें कर रहा था । बंसी ने श्याम से पूछा, 'क्यो, श्यामू दफ्तर में तुम क्या करते हो ?'

'यही बाबूगिरी यानी लिखा-पढ़ी का काम ।'

'और दफ्तर में कौन-कौन काम करते हैं ?'

'चपरासी, बाबू और अफसर, लेकिन क्यों बंसी । तुम यह सब क्यों पूछ रहे हो ?'

'यों ही श्यामू । मुझे भी दफ्तर में नौकरी मिल सकती है क्या ?'

श्याम हंस पड़ा—'बंसी, नौकरी मिल तो क्यों नहीं सकती, लेकिन तुम दफ्तर में नौकरी करके क्या करोगे?'

'यों ही, इच्छा हो रही है।'

'तुम दफ्तर की नौकरी के फेर में मत पड़ो, बंसी। तुम अच्छे किसान हो। यहीं गांव में खेती करते रहो।'

'खेती के लिए अब जमीन ही कहा रह गई है?'

'क्यों, क्या हुआ?'

'बेटी की शादी के लिए मैंने अपने भाई से रुपये उधार लिए थे। बाद में मैं रुपये लौटा नहीं सका। उसने मुझ पर मुकद्मा चलाया। मैं मुकद्मा हार गया। इसी में मेरी सारी जमीन चली गई। इसलिए सोच रहा हूं कि अगर शहर में कहीं नौकरी मिल जाए तो अच्छा रहे।'

'लेकिन, तुम गांव के आदमी, तुम्हारा शहर मे मन कैसे लगेगा?'

'नहीं लगेगा, तो लौट आऊंगा। और यहीं कोई काम खोज लूंगा।'

'खैर, जैसी तुम्हारी इच्छा।'

'मुझे भी दफ्तर मे बाबू बनवावोगे न, श्यामू?'

श्याम ने हसते हुये कहा, 'दफ्तर मे बाबू वही बन सकता है जो कम से कम दसवी कक्षा पास हो और तुम चौथी कक्षा तक ही पढे हो। तुम्हे दफ्तर मे चपरासी की नौकरी मिल सकती है।'

'खैर, मैं यही नौकरी कर लूंगा। लेकिन मुझे तुम्हारे दफ्तर में ही नौकरी मिल जाएगी न?'

'यह तो निश्चित नहीं है, बंसी। नौकरी मिलना आसान नहीं है। तुम्हें शहर जाकर पहले काम दिलाऊ दफ्तर मे नाम लिखाना पड़ेगा। फिर तुम्हें इन्टरव्यूज के लिए दफ्तर में मुलाकात के लिए भेजा जाएगा। किसी भी दफ्तर मे तुम्हारी नौकरी लग सकती है।'

कुछ देर बातें करने के बाद बंसी चला गया।

जिस दिन श्याम शहर के लिए रवाना होने वाला था उसी दिन बंसी भी श्याम के साथ शहर चला गया।

शहर पहुंच कर श्याम ने उसी मकान में, जिसमें वह रहता था, बंसी को भी एक कोठरी किराए पर दिलवा दी।

दूसरे ही दिन बंसी ने एम्प्लायमेंट एक्सचेंज जाकर अपना नाम रजिस्टर्ड कराया।

बंसी कई दफ्तरों में इन्टरव्यू के लिए भेजा गया।

उन्हीं दिनों श्याम के दफ्तर में एक चपरासी का स्थान रिक्त हुआ। उस स्थान की पूर्ति के लिए एम्प्लायमेंट एक्सचेंज से लोगों को बुलाया गया। बंसी का नाम भी उन लोगों में था। श्याम ने किसी प्रकार बड़े साहब से बातचीत करके बंसी की नियुक्ति करा ली।

बंसी ने दफ्तर में काम शुरू कर दिया। वह दफ्तर ठीक समय पर जाता, ठीक समय दफ्तर से लौट आता और दफ्तर का काम ईमानदारी और पूरी लगन से करता। वह अपने काम के प्रति ज़रा भी लापरवाह नहीं रहता। इसी वजह से लोग उससे खुश रहने लगे।

बाबू और अफसर लोग पान, बीड़ी सिगरेट और चाय लाने को, कभी कभी घर से खाना लाने को या घर का अन्य काम करवाने को बंसी से कहते तो वह साफ कह देता—"बाबूजी। मैं दफ्तर का काम करने के लिए ही सरकार से तनख्वाह पाता हूं, आपका निजी काम करने के लिए नहीं।"

लोग कहते, "नौकरी में सभी काम करने पड़ते हैं। हम तुम से काम दफ्तर के समय में ही तो करने को कहते हैं।"

"माफ कीजिए, बाबूजी। मैं दफ्तर के समय में दफ्तर के काम के अलावा और कोई काम नहीं कर सकता। मैं इसे बेईमानी समझता हूं।"

जब बाबू लोग बंसी को किसी भी तरह झुका नहीं सके तो एक दिन उन्होंने आफिस सुपरिन्टेण्डेण्ट से उसकी शिकायत करदी। सुप-

रिण्टेण्डेण्ट ने बंसी को बुलाया और समझाया, 'बंसी, हालांकि तुम जो कहते हो, वह ठीक है, किन्तु फिर भी कभी कभी बाबूजी का काम कर ही दिया करो। इसके लिए तुम्हें इन्कार नहीं करना चाहिए। केवल कुछ ही समय का तो काम होता है।'

"आपका यह कहना ठीक है, सुपर्डेण्ड साहिब, लेकिन माफ कीजिए। मैं अपने कर्त्तव्य से डिग नही सकता। दफ्तर में मेरा जो काम है, उसमें यदि मैं गड़बड़ करूं तो आप मुझे कहिए।"

सुपरिण्टेंण्डेंण्ट ने आगे कुछ नही कहा। वह बसी के खिलाफ कोई कार्यवाही तो नही कर सकता था किन्तु, बंसी ने कहा नही माना यह बात उसके दिल में खटक गयी।

बाबू और सुपरिण्टेंण्डेंण्ट, दोनों ही बंसी से अप्रसन्न हो गए। श्यामू ने उसे लाख समझाया, लेकिन वह अपनी जिद पर अड़ा रहा। इधर दफ्तर के बाबूओ ने साहब के कान भर दिए। आए दिन अकारण बसी की शिकायतें होने लगी। और अन्त मे एक दिन उस पर कुछ झूठे इल्जाम लगा कर साहब ने उसे नौकरी से अलग कर दिया।

जिस दिन बसी को नौकरी से अलग किया गया था, उसी दिन बंसी को अपने गाव से तार प्राप्त हुआ जिसमें उसके भाई की मृत्यु की सूचना थी। बंसी उसी दिन अपने गाव चल दिया। गाव पहुंचने पर उसे ज्ञात हुआ कि उसका भाई मरते समय अपनी सारी जमीन जायदाद उसी के नाम कर गया था।

जिस दफ्तर मे बसी नौकरी करता था उस दफ्तर के साहब के चार बेटिया थी। साहब ने तीन बेटियो का विवाह बड़ी धूमधाम से किया था। जिसमे उनका काफी पैसा खर्च हो गया था। अब साहब को अपनी सबसे छोटी बेटी की शादी करनी थी। इसके लिए उन्होने रिश्ता भी तय कर लिया था। और एक दिन शादी का दिन भी आ गया। साहब ने शादी पर अपने आफिस के सभी व्यक्तियों को आमन्त्रित किया।

उन्हीं दिनों वंसी श्याम के यहाँ आया हुआ था। श्याम ने वंसी को साहब के यहां शादी में चलने को कहा तो उसने इन्कार कर दिया।

लेकिन श्याम के बहुत आग्रह करने पर वह उसके साथ चला गया।

जब तक बारात आ चुकी थी। दरवाजे पर लड़के के पिता ने साहब से तय हुए दहेज के अलावा पांच हजार रुपये और मांगे तो उन्होंने सिर झुका कर कहा, "क्षमा कीजिए, और रुपये मैं अभी नहीं दे सकता। मैं बाद में दे दूंगा।"

"जब आप इतने से रुपयों का इन्तजाम नहीं कर सकते थे तो आपने शादी तय क्यों की?"

"मैं जल्दी ही इन्तजाम कर दूंगा।"

किन्तु लड़के का पिता नहीं माना। उसने बारात लौटाने का निश्चय कर डाला। साहब उसके बहुत पैरों पड़े लेकिन कुछ न हुआ।

वंसी यह सब देख और सुन रहा था। उसने आगे बढ़ कर दृढ़ शब्दों में कहा यह बारात नहीं लौटेगी। यह साहब की इज्जत का सवाल है। आपको रुपये मिल जाएंगे।"

साहब ने वंसी की ओर घूर कर आश्चर्य से देखा, और पूछा, तुम कौन हो?"

"मैं वही वंसी हूं, जिसे एक दिन आपने झूठे इल्जाम लगा कर नौकरी से अलग कर दिया था।"

साहब ने कुछ देर की चुप्पी के बाद कहा, "लेकिन मैं इतने रुपये दूंगा कहां से?"

"आप इसकी चिन्ता मत कीजिए, साहब। रुपये मैं दूंगा।"

'तुम ?', साहब जैसे एकदम से आसमान से गिर पड़ ।

"हां साहब अब बारात नहीं लौटेगी।"

साहब ने रुंधे गले से कहा, "बंसी, एक दिन मैंने अकारण तुम्हारे ऊपर झूठे इल्जाम लगा कर तुम्हें नौकरी से अलग कर दिया था और तुम ही आज देवता बन कर आड़े वक्त मेरी मदद करने आए हो।"

"मैं कोई देवता नहीं, साहब ! चपरासी लोग छोटे आदमी जरूर होते हैं। लेकिन वे भी आखिर होते तो इन्सान ही हैं। उनकी भी अपनी कोई इज्जत होती है। खैर, आपने जो ठीक समझा किया लेकिन इस समय तो आप संकट में हैं। इस समय आपकी मदद करना मेरा कर्त्तव्य है।"

"ओह बंसी ! तुम देवता ही हो।"

साहब की आंखों में आंसू भर आए।



8

बेगुनाह

मैं चीखता रहा, चिल्लाता रहा, रोता रहा, गिड़गिड़ाता रहा किन्तु किसी ने मेरी एक न सुनी और मैं जेल की एक कोठरी में बन्द कर दिया गया। मुझे मेरे बच्चे राजू की याद आई। अब मेरे राजू का क्या होगा, कौन उस नन्ही सी जान को सहारा देगा। दुनिया में कोई भी तो मेरा नहीं।

अचानक मेरी दृष्टि बाहर खड़े सन्तरी पर पड़ी। मैंने गिड़गिड़ाते हुए उस सन्तरी से कहा, 'सन्तरीजी ! दुनिया में मेरे बच्चे का मेरे सिवा कोई नहीं है। इस आड़े वक्त आप ही उस पर रहम खाइये। मेरे बच्चे को मेरे जेल से रिहा होने तक आप ही सहारा दीजिए। मैं आपका यह एहसान कभी नहीं भूलूंगा। छः महीने तक मेरे बच्चे पर आपका जितना पैसा खर्च होगा, मैं जेल से छूटने के बाद उसकी पाई पाई चुका दूंगा। आप चाहे तो'

'बन्द करो यह बकवास,' सन्तरी गरमा गया, 'तुम्हारे जैसे यहां न जाने कितने आते हैं। हम किस किस की मदद करें।'

'सन्तरी जी ! यदि हूं भी तो चोर मैं हूं। मेरा नन्हा-सा अबोध बालक तो नहीं। आप उसके सिर पर साया बन जाइये। उस पर रहम कीजिए।'

'अगर अपने बच्चे का इतना ही ख्याल था तो चोरी करने जाने से पहले क्यों नहीं सोचा कि पकड़े गए तो तुम्हारी उस नन्ही-सी जान का क्या होगा। अब चुपचाप पड़े रहो। ज्यादा शोर मत करो।'

मैं निरुत्तर हो गया। सन्तरी ने ठीक ही तो कहा था। चोरी करने के लिए जाने से पूर्व मैंने यह सोचा ही नहीं था, कि मैं पकड़ा गया, तो मेरे राजू का क्या होगा। किन्तु उस समय मैं मजबूर था।

राजू के विषय में सोच सोच कर रोते हुए न जाने कब मुझे नींद आ गई।

'राजेश ! राजेश !.........'

'कौन ?.....अरुण.....तुम ?.....कब आए ?'

'आज ही आया हूं। दिवाली पर आना चाहता था, किन्तु परिस्थितियों वश नहीं आ सका। आज आया तो तुम्हारे विषय में समाचार मिला। घर से सीधा यहीं चला आ रहा हूं।'

'अच्छा हुआ जो तुम आ गए। राजू कहां है ? अच्छी तरह तो है न ?'

'हां। तुम उसकी चिन्ता मत करो।'

'तुम उसे यहां क्यों नहीं लाए, अरुण ? मैं उसे एक बार देखना चाहता हूं।'

'उसे यहां बुलाना चाहते हो, ताकि वह देख ले कि उसका बाप चोर है और जेल में पड़ा सजा के दिन काट रहा है।.........'

'अरुण.....!'

'उसे भी अपराधी बनाना चाहते हो ?.....'

'अरुण.....'

'चोरी करने के लिए जाने से पूर्व तुम्हें बच्चे का ध्यान नहीं आया ? यह नहीं सोचा कि बाद में उसका क्या होगा ?'

'मैं मजबूर था, अरुण।'

'ऐसी कौन-सी मजबूरी थी, जिसके कारण तुमने चोरी जैसा अपराध किया ?'

'मुझे अपराधी या चोर मत कहो, अरुण। मैं चोर नहीं हूं। मैंने चोरी नहीं की।'

'इसलिए कि तुम पकड़े गए ?'

'नहीं, अगर पकड़ने वाले दो मिनट की भी देर कर देते तो मैं खाली हाथ ही लौट आता।'

'अजीब बात है, तुम चोरी करने के उद्देश्य से गए थे और फिर खाली हाथ ही लौट आना चाहते थे। आखिर यह सब क्या चक्कर है ? अच्छा कमाते हुए भी तुमने ऐसा क्यों किया ?'

'मैं कमाता ही तो नही था, अरुण ! इसीलिए तो मुझे आज ये दिन देखने पड़ रहे हैं।'

"तुम्हारी नौकरी क्या हुई ?'

'चली गई।'

'कैसे ?'

'अस्थायी थी, इसलिए।'

'तो तुम कोई और नौकरी खोजते। तुमने चोरी करने की क्यों सोची ?'

कुछ देर खामोश रहने के बाद मैंने कहा, 'यह मेरी दुःखभरी कहानी है, अरुण ! कहानी को सुनने के बाद शायद तुम्हे यह विश्वास हो जाएगा कि मुझे निरपराध होते हुए भी सजा दी गई है।'

'बेकार होने के बाद में नौकरी की खोज मे दर-दर भटकता रहा लेकिन मुझे हर जगह 'नो वैकेन्सी' की तख्ती दिखाई गई। मेरे पास सिफारिश नही थी। इसलिए जहां जगह थी, वहां भी काम नही बना।

'धीरे-धीरे मेरा सारा पैसा खत्म हो गया। फिर मैंने घर का सामान बेचना शुरू किया। मैं तो एक वक्त खाकर ही रह जाता था किन्तु मेरा बच्चा कैसे रहता। मैंने कई व्यक्तियो से उधार मांगा किन्तु कोई भी देने को तैयार नही हुआ। उधर मकान मालिक किराए के लिए परेशान करता। देखते ही देखते घर का सामान भी बिक गया और एक दिन ऐसा आया कि मेरे पास बेचने लायक कुछ भी नही रहा।'

'इधर दिवाली नजदीक आ गई थी। मुझे भी दिवाली का त्योहार मनाना था। मैं नौकरी की खोज बराबर कर रहा था, किन्तु मुझे सफलता नही मिल रही थी। दिवाली मनाने के लिए पैसे न होने पर मैंने सोचा कि कही कुछ मजदूरी करके ही कुछ पैसे जुटा लूं जिससे कम

से कम लक्ष्मी पूजन का सामान, कुछ मिठाई और राजू के लिए पटाखे खरीदे जा सकें। किन्तु मुझे मजदूरी भी नहीं मिली।'

'दिन भर मारे-मारे फिरने के बाद रात को मैं भारी हृदय लिए घर लौटा तो मैंने राजू को फर्श पर सोया हुआ पाया। उसके गालों पर दो आंसू की बूंदें पड़ी हुई थी। शायद वह रोते-रोते सो गया था। अपने घर की हालत और अपने नन्हें से बच्चे की ऐसी दुर्दशा देख कर मेरा हृदय रो उठा। मैंने राजू को उठा कर सीने से लगा लिया और मैं रो पड़ा। आवाज से राजू जाग गया और वह भी भूख के कारण रोने लगा। उस समय हमारा दु:ख देखने-सुनने वाला कोई भी नहीं था। राजू रोटी और पटाखों के लिए रो रहा था। एक बाप अपने बेटे को भूख-प्यास के कारण रोते हुए कभी नही देख सकता। भूख के कारण मैं भी तड़प रहा था। मेरी सहनशीलता सीमा से बाहर हो गई। मेरा हृदय विद्रोह कर उठा। अचानक मैं किसी निश्चय पर पहुच गया। मैंने राजू को फर्श पर बैठा कर कहा, कि मैं उसके लिए खाना और पटाखे लेने जा रहा हू। और मैं चुपचाप वहां से चल दिया।

'रात के करीब बारह बजे का समय था। शहर में अब भी खूब रोशनी हो रही थी। पटाखा चलने की आवाजें बराबर सुनाई पड़ रही थी। दिवाली की रात का माहौल एक अजीब सा समा बाध रहा था। शहर में लोग दिवाली मना रहे थे। हर कही खुशी का ही साम्राज्य था। एक मैं ही अभागा ऐसा था, जो रो रहा था—अपनी हालत पर आंसू बहा रहा था। जिसे सहारा मिलना तो दूर रहा, सहानुभूति के दो शब्द भी कहीं से नही मिल रहे थे।'

"हमारे मकान से कुछ दूर आगे एक सेठ की कोठी है। वहां उस समय तक सभी सो गए थे। सेठ की कोठी विद्युत के बल्बों से जगमगा रही थी। रोशनी के कारण भीतर घुसने का कोई भी रास्ता नहीं था। अतः मैं अहाते की दीवार लांघ कर छुपता हुआ एक कमरे के पास पहुंचा और खिड़की के रास्ते से भीतर कूद गया। मैंने देखा कि सेठ फर्श पर औंधा पड़ा हुआ है और पास ही शराब की बोतलें पड़ी हैं। मेरा खून खौल

उठा। मैंने सोचा कि इन लोगों को शराब पीने और सभी तरह की मन-मानी करने के लिए पैसा नसीब हो जाता है किन्तु गरीबों को दोनों वक्त पेट भरने के लिए भी नही मिलता।'

"मैंने किसी प्रकार तिजोरी की चाबी खोज निकाली। तिजोरी खोलते ही मैं दंग रह गया। क्षण भर में ही ढेर सारी नोटों की गड्डियां और जेवर मेरे हाथों में था।"

'तभी मेरे हृदय में तूफान की तरह एक विचार उठा–यह चोरी है, मैंने चोरी की है यदि किसी ने मुझे पकड़ लिया तो वह मुझे पुलीस के हवाले कर देगा। मुझे सजा हो जाएगी। तब""तब मेरे बच्चों का क्या होगा। मेरे राजू का क्या होगा। नही नही, मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए। फिर मैंने सोचा कि आज दिवाली है। मुझे दिवाली मनानी है। राजू के लिए पटाखे और मिठाई खरीदनी है। फिर हाथ मे आई हुई लक्ष्मी को क्यों गंवाया जाए। अब मुझे सिर्फ चुपचाप भागना ही तो है। ढेर सारी दौलत मेरे पास होगी और फिर शायद मुझे कभी नौकरी नहीं करनी पड़ेगी। मेरी रोज ही दिवाली मनेगी। अतः क्यो न मौके का लाभ उठाऊं।'

"बहुत सोचने पर भी न जाने क्यों मेरे दिल ने चोरी करना गँवारा नही किया। अन्त में मैंने माल वापस तिजोरी में रख दिया। उसी समय सेठ उठ बैठा। उसने मुझे देखते ही "चोर चोर" चिल्ला कर शोर मचा दिया और लड़खड़ाते हुए उठ कर मुझे पकड़ लिया। उसका चिल्लाना जारी रहा। मैं किसी प्रकार उसे धकेल कर भागा लेकिन तब तक कई व्यक्ति वहा आ गये थे। उन्होंने मेरा पीछा किया। अपने आपको बचाने का भरसक प्रयास करने के बावजूद भी मैं पकड़ा गया और पुलिस के हवाले कर दिया गया। मैंने बहुत कहा, कि मैंने चोरी नही की, मैं बेगुनाह हूं। किन्तु किसी ने मेरी न सुनी। मुझ पर मुकदमा चला और मुझे छः माह की सजा हो गई।'

'यही मेरी कहानी है, अरुण।'

तभी सन्तरी ने अरुण से कहा, 'मिलने का वक्त खत्म हो गया, चलो।'

अरुण ने उठते हुए कहा, 'मुझे तुमसे पूरी हमदर्दी है, राजेश! लेकिन अफसोस, मैं तुम्हें रिहा कराने में असमर्थ हूं।'

'मेरी एक प्रार्थना है, अरुण!....', मेरा गला भर आया।

'राजू की ओर से तो तुम जरा भी चिन्ता मत करो, अरुण ने बीच में ही कहा, तुम्हारे जेल से रिहा होने तक उसकी देखभाल की पूरी जिम्मेदारी तुम मुझ पर छोड़ दो।'

मैं कुछ नहीं बोल सका। मेरी आंखों ने दो आंसू गिराकर कृतज्ञता प्रकट करदी।

9

बेचारा भिखारी

'बाबूजी, एक पैसा, बाबूजी ।'

'अबे हट ।'

'बाबूजी ! गरीब को एक पैसा देदो, बाबूजी ।'

'भीख माँगते शर्म नहीं आती ?'

'एक पैसा, बाबूजी ! भगवान आपका भला करेगा ।'

'अबे हट्टा-कट्टा होकर भी भीख मांगता है । नौकरी क्यों नहीं करता ?'

'नौकरी नहीं मिली, इसीलिए तो भीख के लिए दुनिया के आगे हाथ फैलाना पड़ता है ।'

'तो कोई व्यापार किया होता ।'

'व्यापार के लिए पूंजी ही कहां थी, बाबूजी ?'

'अच्छा-अच्छा, बातें मत बना, आगे चल ।'

'दे दो, बाबूजी ! दो दिन से भूखा हूं ।'

'यह ले ।'

'बाबूजी ! एक नया पैसा ?'

'तो क्या सौ का नोट दूं ?'

'गरीब पर रहम कीजिए, बाबूजी ! दो दिन से अन्न देखा तक नहीं है ।'

'यह लो, बाबा ! कुछ खा लेना ।'

भिखारी श्यामू की आंखें खुशी से चमक उठी । उसे एक [illegible]
दूध सी सफेद चमकती हुई चवन्नी मिल गयी थी । वह [illegible]
उस चवन्नी की ओर देखता रहा । शायद उसने जब से

किया था, तब से उसे पहली बार भीख में चवन्नी मिली थी। श्यामू को भीख माँगना आरम्भ किए मुश्किल से 15–20 दिन हुए थे। उसने इतने अल्पकाल में ही यह जान लिया था, कि दुनियां मे सभी व्यक्ति एक से नहीं है। उसने दुनिया में ऐसे व्यक्ति भी देखे थे जिनके आगे हाथ फैलाओ तो एक खोटा नया पैसा भी नहीं मिले और ऐसे व्यक्ति भी देखे थे जो दिल से बहुत उदार होते थे और तुरन्त ही उसे भीख दे देते थे।

श्यामू चवन्नी लिए खुशी-खुशी आगे बढ़ा। सहसा एक साइकिल से उसकी टक्कर हो गई। उसके हाथ से चवन्नी छूट कर गिर गई। उसके चोट तो लगी थी किन्तु उसने अपनी चोट की ओर ध्यान नहीं दिया। वह तुरन्त उठा और इधर-उधर अपनी चवन्नी खोजने लगा किन्तु चवन्नी कहीं न मिली। उसने रोते हुए साइकिल वाले बाबू को पकड़ लिया।

'बाबूजी! मेरी चवन्नी दो।'

'कौन-सी चवन्नी बे ?'

'आपने मुझे साइकिल की टक्कर मार कर गिरा दिया। इसी से मेरी चवन्नी खो गई। मैं मेरी चवन्नी आपसे लूंगा।'

'हरामजादे के दूंगा झापड़। देख कर क्यों नहीं चलता, हरामी!'

'देख कर आप नहीं चलते, बाबूजी। आपने मुझे टक्कर मार कर गिरा दिया। मैं आपसे लूंगा मेरी चवन्नी। दो मेरी चवन्नी।'

'हटता है कि दूं थप्पड़! तू भिखारी, तेरे पास कहां से आई चवन्नी ? किसी की जेब काटी होगी।'

'नहीं, वह चवन्नी मुझे भीख में मिली थी।'

साइकिल वाले बाबू ने ठहाका मारा और कहा, तुझे भीख में चवन्नी मिली थी ?'

'हाँ, दो मेरी चवन्नी।'

'अबे कमीज छोड़ दे। नहीं तो अभी बेमौत मारा जाएगा।'

'नहीं बाबूजी! मैं नहीं छोड़ूंगा। मेरी चवन्नी दो।'

'ले दूं, तुझे चवन्नी।'

और साइकिल वाले बाबू ने श्यामू को मारना शुरू कर दिया। लेकिन श्यामू ने उसे छोड़ा नहीं। बाबू उसे बराबर मारता रहा।

देखते ही देखते तमाशा देखने वालों की भीड़ लग गई। भीड़ में एक सिपाही भी था। उसने साइकिल वाले बाबू से कहा, 'क्या बात हो गई, बाबूजी ?'

'देखो न हरामजादा मेरे पीछे पड़ा हुआ है।'

भिखारी ने सिपाही से याचना की, 'सिपाही जी ! इन बाबूजी ने मुझे साइकिल की टक्कर मार कर गिरा दिया। उसी में मेरी चवन्नी खो गई। अब वे मेरी चवन्नी नहीं देते।'

बाबू ने कहा, 'देखिए हवलदारजी, ये पाजी झूठ बोल रहा है। इसके पास चवन्नी कहां से आती ?'

सिपाही ने श्यामू से कहा, 'हट बे हट ! किसी शरीफ आदमी के गले पड़ते शर्म नहीं आती ?'

सिपाही ने श्यामू को अलग करना चाहा किन्तु श्यामू ने बाबू को छोड़ा नहीं। अन्त में सिपाही ने श्यामू को जबर्दस्ती अलग किया। बाबू साइकिल पर बैठ कर भाग गया।

श्यामू वहीं खड़ा खड़ा अपने भाग्य पर रोता रहा। लोग उसी को दोष देते रहे।

'ये भिखारी भी बड़े बदमाश होते हैं। फिजूल शरीफ आदमियों के गले पड़ जाते हैं।'

'जरा सोचिए। इसे भीख में चवन्नी कौन देता ?'

'जरूर किसी की जेब काटी होगी।'

'शरीर से हट्टा-कट्टा होकर भी भीख मांगता है। कमा कर नहीं खाता, काम चोर।'

'अजी कमाने में मेहनत जो करनी पड़ती है।'

'हां, जब भीख मिल जाती है, तो कमाने की क्या जरूरत।'

इसी प्रकार लोग श्यामू को दोषी ठहराते हुए आगे बढ़ गए। पास ही खड़ा एक युवक, जो यह झमेला काफी देर से देख रहा था, बुदबुदाया, 'वाह री दुनिया! साइकिल वाले ने बेचारे गरीब को टक्कर मार कर गिरा दिया और इतना मारा भी, इस पर भी लोगों ने इस गरीब को ही दोषी ठहराया।'

युवक ने आगे बढ़ कर श्यामू के हाथ में एक चवन्नी रखदी फिर वह चुपचाप चला गया। उस गरीब की आंखें एक बार फिर से चमक चमक उठी और वह उस युवक की ओर देर तक कृतज्ञता से देखता रहा।

श्यामू चवन्नी लिए खुशी-खुशी आगे बढ़ा। उसने एक दूकान से कुछ खाने-पीने का सामान खरीदा फिर वह खाता हुआ चल दिया।

श्यामू अपनी इस जिन्दगी से परेशान था। उसे भीख मांगना अपमानजनक लगता था किन्तु मजबूरी थी। दोनों वक्त पेट भरने के लिए भीख मांग कर खाने के सिवा और कोई चारा भी तो नहीं था।

अब तक रात पड़ चुकी थी। श्यामू एक स्थान पर पहुंचकर सो गया देर तक करवटें बदलने के बाद भी उसे नींद नहीं आई। आज और दिनों की अपेक्षा अधिक कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। ठण्डी हवा सांय-सांय कर रही थी। श्यामू सर्दी के मारे पत्ते की तरह कांपने लगा। उसके पास केवल ओढ़ने के लिए एक फटी हुई मैली और पतली-सी गूदड़ी थी जिसमे उसे बहुत सर्दी लग रही थी। नींद थी कि आने का नाम ही नहीं लेती थी। श्यामू आंखें बन्द किए पड़ा रहा। अपनी हालत पर सोचता रहा।

आज उसे यह दिन देखने पड़ रहे थे और एक समय था, जब श्यामू के पास अपने गांव में कई एकड़ जमीन थी। वह और उसका छोटा भाई रामू दोनों खेती करते थे। श्यामू रामू को बहुत प्यार करता था। रामू श्यामू की हर काम में मदद करता था। और वह श्यामू का बहुत आदर भी करता था।

श्यामू अच्छा पैसे वाला आदमी था। इसके अतिरिक्त वह एक नेक

श्रौर उदार व्यक्ति भी था। वह गांव के हर व्यक्ति की हर प्रकार से मदद करता था। यही कारण था, कि लोग उसकी काफी इज्जत करते थे।

श्यामू के बूढ़े-मां-बाप जीवित थे। श्याम अब भी उनका काफी श्रादर करता था। दोनो भाई अपने मा-बाप की हर प्रकार से सेवा करते श्रौर उन्हें कभी भी किसी भी बात से दुःखी नही होने देते।

श्यामू के एक सुन्दर-सी पत्नी श्रौर चार बच्चे थे। उसकी पत्नी लक्ष्मी बहुत सुन्दर थी। एकदम गोरी श्रौर जवान। श्यामू उसकी सुन्दरता को देखता तो देखता ही रह जाता। वह उसकी खुशियो का हमेशा ख्याल रखता। उसे कभी भी किसी भी बात से दुःखी नहीं होने देता। लक्ष्मी भी श्यामू को प्रसन्न रखती। खेत पर जाकर उसके काम में हाथ बंटाती। रात को सास-ससुर के पैर दबाने के बाद उसके पैर दबाने बैठती तो वह प्यार के साथ कहता, 'लक्ष्मी, तू तो मेरे मा-बाप की सेवा किया कर। मेरी अभी ऐसी उम्र कहां है, जो मैं तुझ से पैर दबवाऊं।'

तब वह कहती, 'दिन भर खेत में मेहनत करते हो। थक जाते होगे।'

'मैं अभी जवान हूं, लक्ष्मी। जवानो के लिए थकावट कोई चीज नही होती।'

'कुछ भी हो, आपकी सेवा करना तो मेरा धर्म है।'

'तू तो लक्ष्मी, साक्षात् लक्ष्मी है। मैं तो समझता हूं कि इस इतनी बड़ी दुनियां में मैं ही एक ऐसा सौभाग्यशाली व्यक्ति हूं जिसे सुन्दर श्रौर अच्छी पत्नी मिली है!'

'श्रौर मैं भी यही सोचती हूं कि नारियो मे मैं ही एक ऐसी सौभाग्यशाली नारी हूं, जिसे ऐसा देवता प्राप्त हुआ है।'

श्यामू के चार छोटे-छोटे नन्हे मुन्ने बच्चे थे। कितना प्यार करता था, वह उन्हे! सुबह अपने हाथों उन्हे स्नान कराता श्रौर प्यार के

खाना खिलाता। बच्चे भी श्यामू से बहुत प्रसन्न रहते। कभी-कभी वे आपस मे झगड़ा कर अपनी-अपनी शिकायत लिए श्यामू के पास पहुंचते तो वह तुरन्त उनका झगड़ा निपटा कर उन्हे खुश कर देता।

श्याम को जब श्याम खेत से लौटता तो बच्चों के लिए कुछ न कुछ लेकर लौटता बच्चे उसे चारों ओर से घेर लेते। वह लाई हुई चीज उनको बाट देता और उन्हें उठा कर प्यार से चूम लेता।

सबसे छोटा बच्चा मुन्ना अपनी किलकारियों से घर भर को गुंजा देता। जब लक्ष्मी काम कर रही होती तो श्यामू उसे गोद में उठा कर खिलाता। मुन्ना क्षण भर मे ही खुश हो जाता। उसके छोटे-छोटे दुग्ध-धवल दात चमक उठते और बस, श्यामू उसके प्यार में खो जाता।

ऐसी थी श्यामू की गृहस्थी। कितना प्रसन्न था, श्यामू अपनी इस गृहस्थी मे। एक दिन श्यामू की इस सुन्दर गृहस्थी पर क्या, सारे गांव पर ही अकाल की छाया पड़ी। उस वर्ष बहुत जोर की बारिश हुई। सारे खेतों में बरसात का पानी भर गया। श्यामू के खेत भी न बच सके। उसकी खून-पसीने से पैदा की हुई चावल की खेती नष्ट हो गई। यही नही, इसके बाद एक दिन नदी मे भीषण बाढ आ गई जिसमें सारा गाव बह गया। श्यामू और गाव के कुछ व्यक्तियों को छोड़ कर सभी व्यक्ति बाढ़ की भेंट चढ़ गए। श्यामू इसे अपना दुर्भाग्य ही समझता था कि परिवार में केवल वही बचा। उसे अपने गांव और गृहस्थी के नष्ट होने का इतना आघात पहुंचा कि उसने आत्महत्या करने की ठानी लेकिन लोगों ने उसे ऐसा करने से मना किया और हिम्मत से काम लेने को कहा।

श्यामू शहर चला आया। उसने कई जगह नौकरी तलाश की। एक तो उसे नौकरी मिली ही नही, दूसरे कही मिली भी तो लोग उसे अनजाने होने के कारण नौकरी देने को तैयार नही हुए।

श्यामू कई-कई दिन तक भूखा रहा। किन्तु पापी पेट को तो किसी प्रकार भरना ही पड़ता है। अब श्यामू के लिए भीख मांगने के सिवा कोई चारा नही रहा। उसने लाख चाहा कि भीख न मागे, किन्तु मजबूरियो ने उसे ऐसा करने पर विवश कर दिया।

सोचते-सोचते पता नहीं, कब श्यामू की आंख लग गई।

प्रातःकाल जब श्यामू देर तक नही उठा तो लोग इकट्ठे हो गये। जांच करने पर ज्ञात हुआ कि बेचारा श्यामू इस दुःख-दर्द और अभावो की दुनियां से सदा के लिए विदा ले चुका था।

10

साथ हमारा छूटे ना

गंगा के उस पार से बासुरी की मीठी-मीठी ध्वनी सुनाई पड़ रही थी गांव की एक भोली लड़की राधा सिर पर मटका रखे पानी भरने उस ओर से गुजर रही थी। बासुरी की सुरीली ध्वनी उसके कानों में पड़ी सो दो मिनट के लिए वह वहां रुक गई और उस कर्णप्रिय ध्वनि को सुनने लगी। उस ध्वनि में एक मधुर आकर्षण था जो बरबस ही राधा को अपनी ओर आकर्षित कर रहा था। गोधुली का वातावरण बासुरी की ध्वनि को चार चाद लगा रहा था। राधा बांसुरी सुनते सुनते झूम उठी। वह बासुरी की ध्वनि की ओर बढ़ी। कुछ दूर जाने पर उसने एक बीस बाईस वर्षीय युवक एक वट् वृक्ष के नीचे बैठा बांसुरी बजाते हुए देखा युवक ने सफेद कुर्त्ता और सफेद धोती पहन रखी थी। उसका रंग सावला एवं सुन्दर था। उसकी आखें बन्द थी। वह बांसुरी बजाता बजाता न जाने कौनसी दुनियां में खो गया था। राधा खामोश खडी युवक के चेहरे की ओर देख रही थी। वह खड़ी खड़ी बेचैन हो उठी। युवक के नेत्र अभी तक बन्द थे। राधा के हृदय में प्यार की एक चिनगारी भड़की। वह सयानी हो चुकी थी। अब उसे एक जीवन साथी की आवश्यकता थी। उसने मन ही मन में युवक को अपना जीवन साथी चुन लिया। युवक से किस प्रकार परिचय प्राप्त किया जाय, यही एक समस्या थी। समय निरन्तर बढ़ता जा रहा था किन्तु युवक की समाधि नहीं टूटी।

आखिर कुछ देर बाद युवक की समाधि टूटी। उसके नेत्र खुले। कुछ क्षणों के लिए उनमें प्रसन्नता झलकी। युवक ने एक अंगड़ाई ली। उसी क्षण उसकी नजर राधा पर पड़ी तो अकस्मात दोनों की नजरें टकरा गई।

'युवती, कौन हो तुम ? तुम्हारा परिचय और यहां आने का कारण ?' युवक ने राधा से पूछा। उसके शब्दों में कोमलता एवं एक मीठी मुस्कान थी। राधा ने अपना परिचय दिया। उसने बताया, कि वह ग्राम के सरपंच शिवदीन की इकलौती पुत्री है। उसका इस दुनिया में पिता के सिवा और कोई नहीं है। पिता एक जागीरदार है।

इसके बाद राधा ने युवक का परिचय पूछा। युवक ने बताया कि उसका नाम निरंजन है और उसका पिता रामसिंह एक गरीब किसान है। वह शहर के एक कॉलेज का छात्र है। छुट्टियों में अपने गाव चला आया था। उसे बांसुरी बजाने का शौक है।

इस आपसी परिचय के बाद दोनों में देर तक इधर-उधर की बातें होती रही। सहसा राधा को ख्याल आया। उसके पिता की तबीयत खराब थी। अतः उसे शीघ्र ही मटका भर कर अपने घर पहुंचना था। राधा ने कहा, 'अच्छा निरंजन बाबू ! अब मैं जाती हूं। मेरे पिता बीमार हैं। मुझे पानी भर कर उनकी सेवा में उपस्थित होना है। वे मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंगे।'

ऐसा कह कर राधा उठ कर खड़ी हो गई।

'अच्छा राधा ! मैं भी चलता हू,' निरंजन ने उठते हुए कहा, 'अब शाम हो चुकी है। हां, मैं गोधुली की वेला में यहीं आकर बैठ जाता हू और बांसुरी बजाता रहता हूं। तुम कल अवश्य आना।'

इसके बाद राधा कुए की ओर और निरंजन अपने घर को मुड़ने को ही थे कि सरपंच शिवदीन लकड़ी खटखटाता हुआ वहां आ धमका। राधा व निरंजन हक्के-बक्के रह गए। शिवदीन ने इन दोनों को इस कदर मिलते देखा, तो क्रोध के मारे जल उठा किन्तु वह अपने क्रोध को पी गया।

'राधा, तू यहां क्या कर रही है ? यह युवक कौन है,' शिवदीन ने पूछा।

राधा ने सहमते हुए उत्तर दिया, कुछ नहीं, बापू ! ये रामसिंह के सुपुत्र निरंजन हैं। ये शहर के कॉलेज मे पढ़ते है। ये यहां बैठे बांसुरी

बजा रहे थे। मैं इनकी बांसुरी की ध्वनि की ओर आकर्षित हुई और इनके पास बांसुरी सुनने आ बैठी।'

'अच्छा, बेटी! अब जल्दी चल।' कह कर शिवदीन राधा का हाथ पकड़ कर कुए की ओर ले गया। फिर निरंजन भी तुरन्त वहां से खिसक गया।

कुए पर पहुंच कर राधा ने मटका भरा। फिर मटके को सिर पर रख कर शिवदीन के साथ हो ली। रास्ते में चलते हुए शिवदीन ने राधा को समझाया, 'बेटी! इस कदर किसी युवक से मिलना उचित नहीं है। जमाना खराब है। यदि किसी ने बात का उल्टा-सीधा मतलब लगा लिया तो तू घर की रहेगी न घाट की। व्यर्थ में गाँव में बदनामी मोल लेनी पड़ेगी। हमें गाव में ही रहना है। यदि एक बार इज्जत चली गई तो फिर बनाना मुश्किल हो जाएगा। लोग तुझे बदचलन कहेंगे और तुझ से कोई शादी नहीं करेगा।'

राधा ने ध्यान से सुना किन्तु चुप रही।

राधा निरंजन के पास वट वृक्ष के नीचे कल भी आई, परसों भी आई और रोज-रोज आने लगी। कभी निरंजन बांसुरी बजा कर राधा को आनन्द के सागर में धकेल देता तो कभी दोनों प्रेम की बातें करते। उनका प्रेम दिन व दिन बढ़ता गया। दोनों एक-दूसरे को जी जान से चाहने लगे। राधा ने वचन दिया कि यदि वह शादी करेगी तो निरंजन के साथ ही और निरंजन ने भी राधा को वचन दिया कि यदि वह भी शादी करेगा तो राधा के साथ ही।

गाँव वाले उधर से निकलते हुए इन दोनों को प्रेम की बातें करते देखते। वे वहां तो कुछ न कहते किन्तु गाव में जाकर आग लगा देते। आग सारे गाव में फैल जाती और सारा गांव ही जल उठता। जिसे देखो वही राधा व निरंजन की बातें करता। उनको और उनके घर वालों को भला बुरा कहता। कोई कहता, 'राधा इतनी बड़ी हो गई। इधर वह बिगड़ती जा रही है, उधर शिवदीन को इसका कोई ख्याल ही नहीं है। यह तो नहीं कि शीघ्र ही उसके हाथ पीले करदे।'

और कोई कहता, निरंजन आज राधा को बिगाड़ रहा है, कल गांव की सारी लड़कियों को बिगाड़ने लगेगा। ऐसे को तो गांव से ही निकाल देना चाहिए।'

सारा गांव दोनों से बुरी तरह जला जा रहा था। वे दोनों प्रेम ही तो करते थे। क्या प्रेम करना भी कोई गुनाह है? एक गुणवान शरीफ युवक किसी शरीफ युवती को प्यार करता है तो क्या बुरा है? यौवन काल में किसे प्यार करना पसन्द नहीं? फिर ये गांव वाले नाहक ही जलते हैं।

उस दिन होली का पर्व था। सारे गांव मे खुशियां मनाई जा रही थी। चारों ओर गीत गाने गाए जा रहे थे। बड़े-बड़े कड़ाहों मे पानी भर कर रंग घोला गया। पिचकारियां इकट्ठी की गई। सारे गांव वालो ने होली खेलने की तैयारी की।

गांव वाले गांव के बीच में एकत्रित हुए और एक दूसरे पर रंग की पिचकारियां छोड़ने लगे और गुलाल उड़ाने लगे। गांव वालों में खुशी ही खुशी झलक रही थी। होली खेलने वाले व्यक्तियों में राधा व निरंजन भी उपस्थित थे। राधा ने निरंजन के ऊपर पिचकारी मारी और निरंजन ने राधा के ऊपर। दोनों देर तक एक दूसरे के ऊपर पिचकारियाँ छोड़ते रहे। गांव वाले तो दोनों मे पहले से ही जले बैठे थे। एक ने सरपंच शिवदीन को शिकायत की। रामसिंह भी वहां उपस्थित था। शिवदीन का इशारा पाते ही सारा गांव निरंजन के ऊपर भूखे शेर की तरह टूट पड़ा। निरंजन ने एक दो को तो संभाला किन्तु गांव वालो की इतनी बड़ी भीड़ से वह भला कैसे जीत पाता। राधा ने बहुत चीखा चिल्लाया कि निरंजन बेगुनाह है। उसे छोड़ दिया जाय किन्तु भला गांव वाले उसकी चीख-पुकार कब सुनते। आखिर निरंजन को मार पीट कर बुरी तरह घायल कर दिया गया। शिवदीन ने हुक्म दिया कि निरंजन को उठा कर गांव के बाहर फेंक दिया जाय। दो-चार गांव वाले निरंजन की ओर बढ़े किन्तु तत्क्षण ही राधा चीखती हुई उसके ऊपर आ गिरी

श्रौर कहने लगी, "निरंजन बिल्कुल बेगुनाह है। इसे गांव से बाहर मत फेंको।'

पत्थर दिल गांव वाले भला उसकी चीख पुकार कब सुनते। एक ने राधा को खींच कर अलग किया तो निरंजन का पिता रामसिंह चीखता हुआ आया और सरपंच शिवदीन से दया की याचना करने लगा, इस बार निरंजन को क्षमा कर दो। यह फिर कभी ऐसा नहीं करेगा। यह मेरा इकलौता पुत्र है। मेरे बुढ़ापे की लकड़ी है। मैं इसकी पूर्ण निगरानी रखूंगा। इसे कभी राधा से मिलने का अवसर ही नहीं दूंगा। इस बार भगवान के लिए इसे छोड़ दो।'

शिवदीन ने रामसिंह की प्रार्थना स्वीकार करली और कहा, 'यदि निरंजन ने फिर कभी राधा की ओर आंख उठा कर भी देखा तो दोनों को गांव से निकलवा दूंगा।'

इसके बाद सभी गांव वाले अपने-अपने घर चले गए।

इधर कुछ गांव वाले सरपंच के साथ उसके घर तक चले आये। सरपंच के साथ राधा भी थी। सरपंच ने उसे एक कोठरी में धकेल दिया और बाहर से ताला लगा दिया।

'तू अपने बाप-दादों की नाक कटवा कर छोड़ेगी। यदि शीघ्र ही कोई अच्छा-सा वर खोज कर तेरी शादी न करदी गई तो मुझे सारे गांव में बदनाम होना पड़ेगा।..........'

इस प्रकार बड़बड़ाता हुआ शिवदीन साथ में आए हुए लोगों के पास आकर बैठ गया। एक समझदार किसान ने कहा, 'शिवदीन जी! यदि मेरा कहना मानो तो शीघ्र ही निरंजन के साथ राधा की शादी करदो।'

'हां, शिवदीनजी,' दूसरे ने समर्थन किया, 'मेरी भी यही राय है। दोनों एक-दूसरे को प्यार करते हैं। यदि राधा की शादी निरंजन के साथ न करके किसी दूसरे के साथ करदी गई, तो उसकी जिन्दगी खराब हो जाएगी क्योंकि वह निरंजन को ही चाहती है।'

'हां', तीसरे ने दूसरे का समर्थन किया, 'यदि राधा की शादी निरंजन के साथ नहीं की गई तो वह इसी प्रकार गाव की दूसरी लड़कियों को बिगाड़ेगा।'

'वैसे भी निरंजन कोई खराब आदमी नही है, 'चौथे ने कहा, 'बेचारा शरीफ है। शहर के कॉलेज में पढता है।'

सरपंच ने बेचैन होकर कहा, 'किन्तु मैं निरंजन के साथ राधा की शादी करूं कैसे ? वह एक मामूली किसान का बेटा है और मैं एक बड़ा जागीरदार हू। मैं यह चाहता हूं कि मुझे कोई ऐसा लड़का मिले जिसका पिता मेरी भाति एक बड़ा जागीरदार हो।'

'यदि आप ऐसा ही चाहते हैं', दूसरे व्यक्ति ने कहा, 'तो पास वाले गाव मे श्यामसिंह नामक एक जागीरदार है। यदि आप कहें तो मैं उसके बेटे के साथ आपकी लड़की की शादी की बात चलाऊं ?'

'अच्छा भाई, तू ही मेरी कुछ मदद कर,' शिवदीन ने कहा, 'मैं तेरा यह एहसान जिन्दगी भर नही भूलू गा।'

उधर रामसिंह निरजन को तोता-मैना की तरह पढा रहा था, 'बेटा निरंजन ! राधा का ख्याल छोड़दे। हमें इसी गाव में रहना है। सरपच बड़ा टेढा आदमी है। कही ऐसा न हो कि वह हमे गाव से निकाल दे या हमारे घर को आग लगादे। जितना हमें अपनी इज्जत का ख्याल है, उतना ही उसे भी अपनी इज्जत का ख्याल है। एक बार यदि इज्जत चली गई तो फिर कभी नही बनती है।'

'बाबा, मैं राधा को प्यार ही तो करता हूं', निरजन ने कहा, 'मैंने कोई गुनाह तो नही किया। राधा मुझे चाहती है और मैं उसे। आप शिवदीन जी से कहिए, कि वे हम दोनो की शादी करदें।'

'किन्तु बेटा, हम उसके योग्य कहा है,' रामसिंह ने निराशा प्रकट करके कहा; ''कहां वह एक बड़ा जागीरदार और कहां मैं एक मामूली किसान। भला हमारा और उसका सम्बंध कैसे हो सकता है। फिर आज उसने हमारी जो बेइज्जती की है।..........नही नही, यह बिल्कुल सम्भव नही।'

'लेकिन बाबा मैं उसे सम्भव कर दिखाऊंगा,' निरंजन ने दृढता के साथ कहा, यदि मेरा प्यार सच्चा है तो मैं एक दिन अवश्य ही राधा को हासिल कर लूंगा।'

'बेटा, मुझे तो यह बिल्कुल असम्भव दिखता है।' रामसिंह ने कहा, 'जरा अपनी इज्जत का ख्याल रखो। कही ऐसा न हो कि बची-खुची इज्जत भी मिट्टी मे मिल जाय।'

इस प्रकार दोनो बाप-बेटा काफी देर तक बातें करते रहे।

रात्रि के लगभग दस बज चुके थे। सारा गांव सो गया था। कभी-कभी कोठी सींचते हुए किसान कोई राजस्थानी गीत गा उठते थे। वही ध्वनि रात्रि के सुनसान वातावरण मे गूंज जाती थी। कुछ देर पश्चात् दोनो बाप-बेटा सो गए। बाप को तो लेटेत ही नींद आ गई किन्तु निरजन के हृदय मे विचारो का तूफान उठ रहा था। उसने निश्चय किया कि वह राधा को प्यार करता रहेगा। वह उसे अपने हृदय से कभी नही निकालेगा, और एक दिन उससे शादी करके ही रहेगा।

सोचते-सोचते पता नही, कब उसकी भी आंख लग गई।

जागीरदार श्यामसिंह के लडके के साथ राधा की शादी तय हो गई। राधा ने बहुत इन्कार किया किन्तु वह मजबूर थी। अपने पिता के आगे उसकी एक न चली। बेचारी दिन रात छुप-छुप कर आंसू बहाया करती। निरजन भले ही राधा से दो मिनट के लिए मिलता था किन्तु मिलता अवश्य था। इस प्रकार, कि किसी को कुछ पता न चले। वह उसे सान्त्वना देता और कहता, 'राधा ! मैं तुम्हारा हाथ किसी दूसरे के हाथों मे नही जाने दूंगा। वक्त आने दो। फिर देखना, मैं क्या करता हूं। तनिक धैर्य रखो।'

आज राधा की शादी थी। प्रातःकाल से ही गाने-बजाने का कार्य-क्रम चल रहा था। राधा की सहेलियां उससे ठिठोली करती किन्तु उसे यह सब पसन्द नही था। आज वह दिन भर से खोई-खोई-सी थी। उसके हृदय मे विचारो का तूफान उठ रहा था। वह सोच नही पा रही थी कि वह क्या करे। बहुत सोचने पर उसने तय किया कि आज यदि निरजन

आएगा तो वह लोगों की आंखों में धूल झोंक कर उसके साथ कहीं भाग जाएगी।

राधा ने बहुत चेष्टा की किन्तु सब निष्फल। सारी स्त्रियों ने दिन भर से उसे घेर रखा था। वह बड़ी बन्दिश में पड़ी हुई थी।

सायंकाल के 5 बज गये किन्तु राधा को अवसर ही नहीं मिला। बारात के आने का समय निकट था। सखियां राधा को शृंगार करा रही थीं। कोई सखी जेवर पहनाती, कोई साड़ी ठीक करती, कोई पंखा झलती और कोई ठिठोली करती। राधा घूंघट में मुंह डाले अपने भाग्य पर आंसू बहा रही थी। चुपचाप, ताकि कोई जान न ले। रूमाल से भीतर ही भीतर आंसू पोंछ लेती थी।

ठीक साढ़े छः बजे खबर मिली कि बारात लगभग दस मिनट के भीतर आने वाली है। यह सुन कर राधा धक् से रह गई। उसका दुःख और भी बढ़ गया। उसने तय किया कि यदि दस मिनट के भीतर उसे निरंजन के साथ भागने का अवसर न मिला तो वह पाणिग्रहण के समय भरी सभा में अपना घूंघट हटा देगी और कह देगी कि उसे यह शादी पसन्द नहीं है। यदि उसकी शादी उसकी इच्छा के विरुद्ध की गई तो वह कुए में गिर कर या जहर खाकर मर जायेगी।

आखिर राधा को किसी प्रकार अवसर मिला। वह तुरन्त ही उठकर अपने कमरे में चली गई। उसने कमरे के दूसरी ओर की खिड़की खोली और बाहर झांक कर देखा। निरंजन एक मोटा-सा रस्सा लिए उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। निरंजन ने राधा को देखा, तो उसके शृंगार को देख कर दो मिनट के लिए उसके मुख पर प्रसन्नता की एक झलक दिखाई दी। फिर उसने प्रश्न किया, "राधा! अब तुम्हारा क्या विचार है?"

राधा ने जल्दी में कहा, "अब बात करने का समय नहीं है। बारात आने वाली है। शीघ्र ही रस्सा फेंक दो। हम यहां से कहीं भाग चलेंगे।"

निरंजन ने तुरन्त ही रस्सा ऊपर फेंक दिया। राधा ने उस रस्से का एक छोर पलंग के पाए से बांध दिया और दूसरा रास्ते में लटका दिया। फिर वह रस्से के सहारे नीचे उतर गई।

निरजन ने राधा का हाथ पकडते हुये कहा, "राधा ! अब हमें यहा तनिक भी नही रुकना चाहिये। यदि किसी ने देख लिया तो सारे किये पर पानी फिर जायेगा। आओ, शीघ्र ही भाग चलें।........"

निरजन राधा के साथ यह बात कर ही रहा था कि शिवदीन के एक आदमी ने इन दोनों को देख लिया और शोर मचा दिया। निरंजन ने राधा का हाथ मजबूती से पकड़ लिया और दोनो सिर पर पैर रखकर भागे।

उस आदमी के शोर मचाने पर शिवदीन व दूसरे आदमी भी फौरन निकल आये और उन दोनो के पीछे बड़ी तेजी से भागें।

राधा और निरजन उनसे काफी दूर भागे थे। दोनों भागते-भागते बेदम हुये जा रहे थे किन्तु रुक नही सकते थे। बीच मे एक पहाडी थी। दोनों दौडकर किसी प्रकार उसके ऊपर चढ़ गये। एक तो थके हुये थे दूसरा उनके पीछे आदमी लगे हुये थे। अतः बच निकलना असम्भव था। पहाड़ी के ऊपर से झरना बहता था जो काफी नीचे चट्टानो पर गिरता था। दोनों ने एक साथ पहाड़ी के ऊपर से छलांग लगाई और नीचे चट्टानों पर आ गिरे।

पीछा करने वाले लोग नीचे उतर कर दोनों की लाशों के इर्द-गिर्द जमा हो गये। शिवदीन अपनी बेटी की लाश को सीने से लगा कर फूट-फूट कर रो पड़ा और चिल्लाने लगा, "बेटी ! मैं ही तेरा हत्यारा हूं। मै तेरा बाप नही, दुश्मन हू। मैंने ऊंच-नीच का भेद-भाव रखा, इसी कारण तेरे प्राण गये। यदि मैं निरजन के साथ तेरी शादी कर देता, तो तुम दोनों के प्राण बच जाते। मैं अपने आपको कभी क्षमा नही कर सकता, बेटी ! मैं अपने आपको कभी क्षमा नही कर सकता।........"

अन्त में एक बड़ी चिता बनाई गई और उन दोनों के शवों को उसके ऊपर रख दिया गया। दोनो जीवन मे एक साथ नही रह सके तो क्या, मृत्यु मे तो दोनों साथ थे। अब उन्हे कोई अलग नही कर सकता था।

□

11

स्वामीजी

खट खट खट..........

"कौन ? रमेश ?"

"हां, मां ! मैं ही हूं।"

मां ने लड़खड़ाते हुये उठ कर दरवाजा खोला। रमेश ने कमरे में प्रवेश किया।

"तेरा मुंह उतरा हुआ क्यों है, बेटा ? नौकरी नहीं मिली ?"

रमेश निरुत्तर रह गया। मां निराश हो गई।

इतने में रमेश का छोटा भाई महेश आ गया।

"भैया, मेरे लिये खाने को कुछ नहीं लाये ?"

"नहीं भाई, क्या करूं, नौकरी ही नही मिली ?"

महेश रो पड़ा।

"भैया, मुझे भूख लगी है।"

"सुबह मैंने तुझे जो चने लाकर दिये थे, वे खा लिये तूने ?"

"हां।"

मां को ओर से खांसी उठी। रमेश ने मां को सम्हाला।

"मां, दवा पी ली ?"

"दवा खत्म हो गई, बेटा।"

रमेश दुःख में डूब गया। मां की दवा लाने के लिये उससे पास पैसे नहीं थे। छोटे से मुन्ने महेश का पेट भरने को भी कुछ नही था और वह खुद भी दो दिन से भूखा था।

बी. ए. पास करने के बाद रमेश ने नौकरी की खोज की। उसने कई प्राइवेट दफ्तरों में नौकरी तलाश की किन्तु उसे नौकरी कहीं न

मिली। जहा जगह थी, वहा अनुभव मांगा गया या सिफारिश बिना बात नही बनी। रमेश के पास दोनों का ही अभाव था। एम्पलायमेंट एक्सचेंज के द्वारा भी वह कई दफ्तरों में गया किन्तु दुर्भाग्य तो जैसे उसका हमराही हो गया था, हर जगह निराशा ही मिली। फिर भी रमेश कोशिश करता रहा।

घर की हालत धीरे-धीरे बिगड़ती गईं, क्योकि एक मात्र कमाने वाला बेकार था। स्कूल की फीस व पढ़ाई के अन्य खर्चे के अभाव मे महेश का स्कूल जाना भी बन्द हो गया था। इधर मां कई दिन से बीमार थी। हाथ की थोडी-सी जमा पूंजी बीमारी में चुक गई। अब मकान मालिक भी रोजाना तकाजा करने लगा था। मकान का कई महीने का किराया चढ़ गया था। घर का मोटा-मोटा सामान भी बिक चुका था। कर्ज बढ़ जाने पर अब इन लोगों के लिये उधार के भी दरवाजे बन्द हो गये।

कुछ ही देर मे मकान मालिक ने आकर आवाज़ लगाई "रमेश...."

"अभी नौकरी नही मिली, माधवजी ! नौकरी मिलते ही मैं आपका सारा रुपया अदा कर दूंगा।"

"तुम रोज यही कहते हो। मैं कहां तक सब्र करूं ? यह कहना अब और नही चलेगा।"

रमेश पहले ही काफी परेशान था। मकान मालिक की हृदय हीनता पर उसे क्रोध आ गया।

"जब नौकरी मिली ही नही, तो मैं आपको किराया कहां से दूं ? चोरी करूं, डाका डालूं ?"

"मैं और इन्तजार नही करुंगा। अब तुम्हे जैसे भी हो, मेरे किराये का इन्तजाम करना ही होगा।"

"आंखें मत दिखाओ, माधवजी।"

"अरे वाह, एक तो कई महीने से किराया दबाये बैठे हो, दूसरा मुझ पर ही रौब झाड़ते हो। कान खोल कर सुन लो, अगर चार दिन

के भीतर-भीतर मेरा किराया अदा न किया, तो मुझे सख्त कार्यवाही करनी पड़ेगी।"

मां को फिर खांसी उठी। उधर महेश भी भूख से बिलख रहा था। रमेश बुरी तरह परेशान हो गया। मां की दवा फौरन लाना आवश्यक था। भूख के कारण वह खुद भी बेहाल हो रहा था। कुछ न कुछ किये बिना काम नहीं चलेगा। उसने उठते हुये कहा, "मां, मैं अभी कहीं से पैसे लाकर दवा लाता हूं।"

"इसकी कोई जरूरत नहीं है, रमेश! तू मेरे लिये इतना परेशान क्यों होता है? मुझे यूं ही मर जाने दे।"

"नहीं मां, कुछ न कुछ करना ही पड़ेगा। मकान मालिक का किराया भी तो चुकाना है।"

"लेकिन तुझे पैसा देगा कौन?"

"मैं कोशिश करूंगा।"

रमेश घर से निकल गया।

उसने कई व्यक्तियों के आगे उधार के लिए हाथ फैलाया किन्तु उसे निराशा ही मिली। जो व्यक्ति उधार देने के लिये तैयार हुए उन्होंने बदले में कोई कीमती चीज मांगी किन्तु रमेश के पास कुछ भी नहीं था।

अन्त में निराश होकर रमेश भारी हृदय लिये घर की ओर चल दिया।

मां की दवा के लिए पैसे, महेश और उसकी भूख, मकान मालिक का किराया, ये सभी आवश्यकतायें एक साथ रमेश के मस्तिष्क में घूमने लगीं। चलते-चलते उसके कदम एक सेठ की हवेली के नीचे पहुंच कर रुक गए।

रात्रि का समय था। बारह बज चुके थे। सेठ की हवेली अंधेरे में डूबी हुई थी। केवल नीचे वाली मंजिल में एक बत्ती जल रही थी। दरवाजे के बाहर पहरेदार हाथ में लट्ठ थामे बैठा था।

रमेश को भीतर प्रवेश करने का कोई रास्ता दिखाई नहीं दिया। अन्त में वह गली में आकर नाले के सहारे-सहारे ऊपर चढ़ गया। उसने

छज्जे पर पैर रख कर एक खिड़की में से भीतर झांका। भीतर लाइट जली हुई थी। वह धीरे से कमरे मे कूद गया। कमरे मे सेठ अपनी पत्नी के साथ सोया हुआ था। रमेश धीरे-धीरे खोज करने लगा। उसकी दृष्टि दीवार पर टगे सेठ के कोट पर पड़ी। वह उसी ओर बढ़ गया। सहसा सेठ ने करवट बदली। रमेश सेठ को जागा हुआ समझ कर घबरा गया और भागने की कोशिश में मेज से टकरा गया। मेज पर रखा गुलदस्ता नीचे आ गिरा और उसकी आवाज से सेठ उठ बैठा। उसने रमेश को पकड़ लिया और 'चोर-चोर' का शोर मचा दिया। रमेश सेठ को धक्का देकर दरवाजे से बाहर भागा।

सेठ के चिल्लाने की आवाज से हवेली के व पास पड़ौस के लोग धड़ाधड़ बाहर निकल आए। रमेश ने अपने आपको बचाने का असफल प्रयास किया।

वह जैसे ही बाहर निकल कर भागा कि चौकीदार ने उसके पैरों पर लट्ठ का भारी प्रहार किया। वह लड़खड़ा कर गिर गया। किन्तु उसने उसी क्षण उठ कर भागना चाहा। किन्तु चौकीदार व अन्य व्यक्तियों ने उसे पकड़ लिया और कुछ ही देर बाद उसे रस्सी से पकड़ कर बैठा दिया। फिर सभी बड़ी बेरहमी से रमेश को मारने लगे।

"क्या बात हो गई, भाई। किसके यहां चोरी हो गई ?"

यह पास ही के एक मन्दिर के पुजारी जिसे लोग स्वामीजी कहते थे, की आवाज थी। स्वामीजी इन्सान क्या देवता तुल्य थे। वे स्वभाव से बड़े दयालु और सहृदय थे। यही कारण था कि लोग उनका बहुत आदर करते थे।

'सेठजी के यहा चोरी हो गई, स्वामीजी। यह रहा चोर !' एक व्यक्ति ने कहा और रमेश के ओर से एक लात जमादी। पिटते-पिटते रमेश बेहोश हो गया था। उसके शरीर से जगह-जगह से खून बह रहा था। इस पर भी लोग उसे बेरहमी से मार रहे थे। स्वामीजी ने बड़े करुण शब्दों में कहा, "अरे, इस बेचारे को इस कदर क्यों मार रहे हो ?"

"आप इसे बेचारा कहते हैं, स्वामीजी ! इसने चोरी की है....."

सेठ ने कहा, और अपने नौकर को आदेश दिया, "देवू ! जल्दी से पुलिस को फोन करदे।"

'ठहरो', स्वामीजी ने आगे बढ़ कर कहा, "पुलिस को फोन करने की कोई जरूरत नहीं है। एक तो तुम लोगो ने इस गरीब को इतनी बेरहमी से मारा है, दूसरे अब उसे पुलिस के हवाले करके इसकी और दुर्गती करवाना चाहते हो।"

"यह चोर है।"

"इसने क्या चुराया है, तुम्हारा ?"

लोगों ने रमेश की जेबों की तलाशी ली और कहा, "इसकी जेबों में तो कुछ भी नही है।"

"वह तो मैंने जाग कर शोर मचा दिया था, स्वामीजी", सेठ ने कहा, "नही तो यह जरूर चोरी कर लेता।"

तभी स्वामीजी ने रमेश को पहचान कर आश्चर्य के साथ कहा, "अरे यह तो रमेश है। इसे तो मैं जानता हूं। यह बहुत शरीफ है.... । लेकिन इसने कुछ चुराया तो नही। फिर भी तुम लोगो ने इसे इतना मारा।"

स्वामीजी रमेश पर झुक गए। रमेश की ऐसी हालत देख कर उनका करुण हृदय रो उठा।

सेठ ने कहा, "इसने भले ही कुछ न चुराया हो लेकिन यह आया तो चोरी करने के उद्देश्य से ही था। वह चोर है।"

स्वामीजी एकदम खड़े हो गए और बोले, "कोई भी आदमी जन्म से ही चोर, डाकू, गुण्डा और बदमाश नही होता, सेठजी ! उसको सब काम सिखाये जाते हैं और सिखाने वाला है, हमारा समाज। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह जो कुछ करता है, समाज से प्रेरणा लेकर या समाज द्वारा मजबूर किये जाने पर करता है। मनुष्य बुरा काम करे, तो दोष किसी हद तक समाज का भी है जो मनुष्य को उस ओर धकेलता

है। सेठजी, यह आपके यहा चोरी करने आया, हो सकता है-इस बेचारे के ऊपर भी कोई मजबूरी आई हो।"

"यह जवान है। हट्टा-कट्टा है। क्या यह कमा नहीं सकता ?"

"क्यो नहीं कमा सकता है, सेठजी ! इसे कहीं नौकरी ही नहीं मिली होगी।"

"नौकरी नही मिली तो यह व्यापार कर सकता था।"

"व्यापार के लिए पूंजी की जरूरत होती है। और गरीबो के पास पूंजी कहा ?"

"कुछ भी हो, स्वामीजी ! यह समाज द्रोही है। आप एक अपराधी का पक्ष लेकर स्वय भी जुर्म कर रहे हैं। कानून की दृष्टि में आप दोनों ही अपराधी हैं।"

"खामोश ! हम दोनों अपराधी नही, अपराधी हमारा समाज है। आप पैसे से अमीर हैं, सेठजी ! लेकिन दिल से नहीं। आज अगर यह आदमी भी आप ही की तरह अमीर होता तो इसका उतना ही आदर होता, जितना आपका। जरा इस गरीब की सूरत की ओर तो देखिए और बताइये, क्या यह अपराधी मालूम पड़ता है ?.... बेचारा शरीफ, लेकिन दुःखी है। परिस्थितियो ने ही इसे चोरी करने को मजबूर किया होगा।"

"फिर भी यह अपराधी है, स्वामीजी", भीड़ में से किसी ने कहा, "अगर आज इसे माफ कर दिया गया तो इसे अपराध करने को बढ़ावा मिलेगा और यह फिर चोरी करेगा।"

कई व्यक्तियो ने उस व्यक्ति का समर्थन किया।

स्वामीजी ने ऊचे स्वर मे कहा, 'खामोश रहो। मत भूलो कि तुम भी महल और हवेलियो वाले नही हो तुम भी इस आदमी की तरह गरीब हो। तुम्हारे ऊपर भी कभी ऐसी परिस्थितियां आ सकती हैं, जो तुम्हें चोरी करने को तो क्या, किसी की हत्या करने के लिए भी बाध्य कर दें। तुम सब मनुष्य कहलाते हो""""आश्चर्य है कि गरीब को भी, एक गरीब के प्रति जरा भी हमदर्दी नही है। मालूम होता है, तुम लोगो

ने कभी दुःख के दिन नहीं देखे। अगर तुम लोगों पर भी इसके जैसी ही बीतती तो तुम इस कदर बढ़-बढ़ कर न बोलते।

स्वामीजी इसी प्रकार देर तक बोलते रहे। उनकी वाणी का लोगों पर भारी प्रभाव पड़ा। अन्त में स्वामीजी ने रमेश के बन्धन खोल डाले और उसे अपनी भुजाओं मे उठा लिया। एक व्यक्ति ने पूछा,

'स्वामीजी! आप इसे कहा ले जा रहे हैं?'

'अपने घर। इसकी मरहम पट्टी करनी है।'

'लाइये, मैं इसे आपके यहां पहुंचा दूं।'

'नहीं, तुम्हें कष्ट नही देना चाहता।'

स्वामीजी रमेश को अपने घर ले गए। उन्होने उसे एक चारपाई पर लिटा दिया और उसकी मरहम-पट्टी की। कुछ ही देर बाद रमेश को होश आ गया। होश आते ही वह बोला, 'कहां हूं मैं, कहां हू मैं?'

'घबराओ नही भाई, तुम मेरे घर में हो। मैं इस मन्दिर का पुजारी हू। लोगों ने तुम्हें मार-मार कर घायल कर दिया था। मैं तुम्हे यहा उठा लाया।'

रमेश तुरन्त उठ बैठा, और बोला, मेरी मां सख्त बीमार है, स्वामीजी। मुझे जल्दी से घर पहुचना है।'

स्वामीजी ने रमेश को रोक लिया। स्वामीजी के पूछने पर रमेश ने चोरी करने जाने का कारण और अपने घर की स्थिति के विषय में सभी कुछ बता दिया। वह सब सुनते ही स्वामीजी का हृदय पिघल गया। उन्होने रमेश को आश्वासन देते हुए कहा, 'घबराओ नही, बेटा! तुम्हें अभी आराम की सख्त जरूरत है। तुम यही लेट कर आराम करो। अपने घर की जरा भी चिन्ता मत करो।'

स्वामीजी ने तुरन्त अपने एक आदमी को बुला कर खाने-पीने का का सामान और रुपये आदि देकर रमेश के घर भेज दिया और यह आदेश दिया कि वह रमेश के घर लौटने तक वही रहे और मां व महेश को जरा भी तकलीफ न होने दे। वह मकान-मालिक का सारा किराया भी अदा करदे।

रमेश स्वामीजी के यहां दस दिन तक रहा। आज वह अपने घर जाने योग्य हो गया था। अब तक स्वामीजी ने उसकी तन, मन, धन से सेवा की थी। जब रमेश जाने लगा तो स्वामीजी ने और रुपये दिए। रमेश ने इसका कारण पूछा, तो स्वामीजी ने कहा, 'इन रुपयों से कोई व्यापार कर लेना, तुम्हें मदद की जरुरत है।'

रमेश ने कहा, 'स्वामीजी ! अब तक आपका हमारे ऊपर काफी कर्जा चढ़ गया है !............'

'मैंने तुम्हारी जो मदद की है, और अब जो रुपये दे रहा हूं, इसलिए नहीं कि एक दिन मैं तुमसे यह वापस मांगूंगा। नहीं बेटा, मैंने तो जन्म ही दूसरों की भलाई के लिए लिया है। तुम जाओ। भगवान् तुम्हें सदा सुखी रखें।'

रमेश की आंखों मे कृतज्ञता के आंसू भर आए। उसने रूंधे गले से कहा, 'स्वामीजी ! आप मनुष्य नहीं, देवता हैं।'

और वह स्वामीजी के पैरों पर झुक गया।

12

हार जीत

अशोक अपने कॉलेज में दादा के नाम से प्रसिद्ध था। वह अच्छे खाते-पीते घर का युवक था। घर में किसी बात की कमी नहीं थी। यों तो उसे पढ़ने की भी जरूरत नहीं थी। कॉलेज तो वह केवल तफरीह के लिए जाता था। बी. ए. में वह पिछले वर्ष चार साल से फेल हो रहा था। मैट्रिक के बाद उसने कोई भी क्लास दो-तीन साल बिना पास नहीं की। बी ए. की परीक्षा में भी वह नकल करने से नहीं चूकता था। पर उसका दुर्भाग्य कहो या सौभाग्य कि वह पास नहीं हो सका। नकल करने का नतीजा उसे मालूम था। परीक्षा के दिनों में यह आम बात है कि परीक्षा में नकल करने वाले या तो पकड़े नहीं जाते और यदि पकड़ लिए जाते हैं और उनमें कोई गुण्डा होता है तो वह आंखें निकाल कर परीक्षक को धमकी दे देता है। परीक्षक मान जाता है अन्यथा अनेक बार उसकी जान तक पर आ बनती है। परीक्षा के दिनों में यह एक जटिल समस्या हो जाती है जिसकी रोकथाम हर स्थिति में आवश्यक है।

लेकिन अशोक को उसकी बेईमानी की सजा और कोई नहीं तो भगवान अवश्य दे रहा था। इन्सान कितने भी बुरे कर्म करे, वह अपने कर्मों को औरों से तो भले ही छुपाले किन्तु भगवान की नजरों से वह अपने आपको कभी नहीं बचा सकता।

अशोक को फेल होने का कभी कोई गम नहीं होता था। उसने तो जैसे कसम खाली थी कि वह सारी जिन्दगी कालेज में ही गुजार देगा। उसे परवाह किसी बात की थी नहीं। इकलौता लाड़ला होने के कारण घर वाले भी उससे कभी कुछ नहीं कहते थे। फिर भी वे इतना अवश्य चाहते थे कि अशोक किसी प्रकार बी. ए. पास कर डिग्री हांसिल करले।

कॉलेज में छात्र तो अशोक का रोब मानते ही थे, कुछ प्रोफेसर भी उससे खौफ खाते थे और उससे बचे रहना ही ठीक समझते थे।

अशोक के कॉलेज में एक नये प्रोफेसर श्री दीनदयाल शर्मा आए थे। वे अपनी किस्म के अजीब ही व्यक्तित्व वाले पुरुष थे। न किसी के अधिक मुंह लगते थे और न किसी का रोब मानते थे। वे एक सच्चे, ईमानदार और व्यवहार-कुशल व्यक्ति थे। वक्त पर छात्रों के साथ हंसी-दिल्लगी भी कर लेते थे, किन्तु अपना असर बराबर बनाए रखते थे। शर्माजी ने अपना कुछ ऐसा असर जमाया था कि अशोक तक की उनके आगे चल नहीं पाती थी। वह उन्हें मानने लगा था।

एक बार जब कॉलेज में बी.ए. फाइनल की परीक्षा हो रही थी, तब पहले ही दिन अशोक ने अपनी आदतों के मुताबिक नकल करने की चेष्टा की। पेपर इतिहास का था, और भाग्यवश पेपर में वे ही प्रश्न आए थे, जिनके उत्तर पर्चियों पर नोट करके वह लाया था। अशोक को पूरी उम्मीद थी कि इस बार वह इतिहास में अवश्य ही पास हो जाएगा।

उस दिन परीक्षा भवन में शर्माजी की ही ड्यूटी लगी हुई थी। शर्माजी ने अशोक को नकल करते देख लिया। उन्होंने अशोक के हाथ से पर्चियां छीनलीं और चेतावनी देते हुए उन्हें फाड़ दिया। अशोक भड़क कर उठ खड़ा हुआ। उसने आंखें निकाल कर कहा, "यह आपने अच्छा नहीं किया। आपको इसका परिणाम भुगतना होगा।"

"मुझे धमकी देते हो," शर्माजी ने पलट कर अशोक की कापी छीन ली और उसे कहा, "जाओ यहां से। जो जी में आए, कर लेना।"

अशोक शर्माजी की ओर खा जाने वाली नजरों से देखता हुआ धीरे-धीरे बाहर चला गया।

उसी दिन शाम को जब शर्माजी पार्क में घूम रहे थे, तब अशोक और उसके चार साथियों ने उन्हें घेर लिया। हर एक के हाथ में हॉकी स्टिकें थीं। अशोक के पास छुरा भी था।

शर्माजी बदमाशों की इस टोली को देखते ही समझ गए कि ये किस इरादे से आए हैं। उन्होंने बिना घबराए दृढ़ता से कहा, "मैं जानता हूं,

तुम लोग यहां किस इरादे से आए हो। मुझे यह कहते शर्म आती है कि तुम उस कॉलेज में पढ़ते हो, जहां मैं पढ़ाता हूं और दुर्भाग्य से तुम मेरी ही क्लास के छात्र हो। और तुम मेरे ऊपर ही हमला करने आए हो। अपने गुरु का अपमान माता-पिता और भगवान के अपमान से भी बुरा होता है लेकिन याद रखो, तुम्हारी इन करतूतों से मेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा मेरी इज्जत में जरा भी फर्क नहीं आएगा।"

अशोक ने अपने साथियों की ओर देखा। शर्माजी बोले, "लेकिन मैं तुमसे इतनी प्रार्थना जरूर करूंगा कि मुझे मारना ही चाहते हो तो यहां मत मारो। यह सूनी जगह है। मुझे किसी भीड़ वाले स्थान पर ले चलो फिर तुम मुझे वहां जितना चाहो, मारना। मैं तुम्हारा हाथ नहीं पकड़ूंगा, न किसी को इसका विरोध करने दूंगा और न ही पुलिस तक मामला पहुंचने दूंगा। कम से कम दुनिया यह तो देख लेगी कि आज गुरू का कितना सम्मान होता है।"

सभी छात्र एक बार तो खामोश रह गए। फिर अशोक के दो साथियों ने आक्रमण के लिए हॉकी उठाई। अशोक ने उन्हें रोक दिया। शर्माजी ने कहा, "क्यों, क्या हुआ? गुरू पर हाथ उठाते हुए शर्म आ रही है क्या? या हिम्मत जवाब दे गई बुजदिलों। लेकिन याद रखो। तुम लोग जिन्दगी में कभी सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। तुम कभी पास नहीं होओगे और इसी प्रकार धक्के खाते रहोगे। तुम जिन्दगी में कभी अच्छे इन्सान नहीं बन सकोगे।"

अशोक ने नजर उठा कर शर्माजी की ओर रखा। फिर धीरे-धीरे उसकी नजरें झुक गईं। उसने अपने साथियों से कहा, 'चलो।'

और पांचों उसी समय लौट गए।

घर आकर अशोक निढाल-सा बिस्तर पर पड़ गया। शर्माजी की बातों से उसको बड़ी चोट पहुंची थी। उसने सोचा कि क्या वास्तव में वह जिन्दगी में कभी पास नहीं होगा। क्या वह कभी एक अच्छा इन्सान नहीं बन सकेगा? मन ने कहा,—नहीं, अब तुम्हें अपने आपको बदलना पड़ेगा। उसने निर्णय लिया कि दादागिरी छोड़ कर वह मेहनत से पढ़ेगा और पास

होकर शर्माजी के कथन को चुनौती देगा। वह उन्हें यह बता देगा कि वह एक अच्छा इन्सान भी बन सकता है।

अशोक ने उसी दिन से दादागिरी और बुरे लड़कों का साथ छोड़ दिया। वह सारे गलत काम छोड़ कर दिन-रात पढ़ाई में जुट गया। अब उसका काम था, केवल पढ़ना और कॉलेज जाना। दूसरी बातों से उसने अपना ध्यान बिल्कुल ही हटा लिया।

परीक्षा के दिन नजदीक आ गए। उसने परीक्षा दी किन्तु ईमानदारी से। सारे पेपर उसके लिए इतने सरल थे कि उसे नकल करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी।

जब परीक्षा का परिणाम निकला तो अशोक सारे कॉलेज में प्रथम आया। अशोक अपनी इस सफलता पर फूला नहीं समाया। परीक्षा परिणाम लेकर वह शर्माजी के यहां गया। उसने शर्माजी से प्रणाम कर कहा, 'सर! आपने कहा था न कि मैं कभी ईमानदारी से परीक्षा देकर पास नहीं हो सकता और जिन्दगी में कभी अच्छा इन्सान नहीं बन सकता। लेकिन मैंने बी० ए० प्रथम श्रेणी में पास किया है। मेरे नम्बर भी कॉलेज भर में सबसे अधिक हैं।'

शर्माजी ने गद्‌गद् होकर कहा, यह तुम्हारी जीत नहीं मेरी जीत है। तुम्हारी जीत तब होती, जब तुम फेल हो जाते। शायद तुमने यह नहीं सोचा कि तुम चार साल से फेल हो रहे हो और इस बार पास हुए हो तो किसकी बदौलत? इतना याद रखो, अशोक! अध्यापक कभी छात्र का बुरा नहीं चाहता है। मैंने तुम्हें जो खरी-खोटी बातें कही थीं, वे तुम्हारे भले के लिए ही थी। तुम क्या यह समझते हो कि मैं वास्तव में यह नहीं चाहता था कि तुम पास न हो और जिन्दगी में कभी एक अच्छे इन्सान न बनो? अपने से बड़े कभी तुम्हारी बुराई के लिए कुछ कहदें तो समझो, कि उसमें भी तुम्हारी भलाई ही है। मैंने तुम्हें जो कुछ कहा था, वह मात्र इसलिए कि तुम्हारा सोया हुआ आत्म सम्मान जागृत हो जाए। और तुम यह दिखा सको, कि तुम भी जिन्दगी में कुछ कर सकते हो। तुमने

पास होकर यही साबित किया। अब मुझे तुम्हारे जैसे होनहार छात्र से भविष्य के लिए अच्छी उम्मीदें हैं।'

अशोक की आंखों से अविरल आंसुओं की धार बह निकली। वह शर्माजी के पैरों पर झुक गया और बोला, 'मुझे माफ कर दीजिए, सर! वास्तव में जीत आप की ही हुई है। मैं हार गया। मैंने आपका बहुत अपमान किया था। किन्तु अब मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि भविष्य में मैं कभी कोई बुरा काम नहीं करूंगा। आपने मुझसे जो उम्मीदें कीं हैं, मैं उन्हें पूरी करूंगा। आप ही मेरे सच्चे पथ-प्रदर्शक हैं।'

शर्माजी ने अशोक के सिर पर आशीर्वाद का हाथ फेरा और उसे सीने से लगा लिया।

13

हृदय परिवर्तन

संध्या का समय था। भगवान् भास्कर अस्ताचलगामी हो चुके थे। ग्राम का सरपंच चौधरी और चार-पाँच अन्य व्यक्ति गांव की चौपाल पर बैठे बातें कर रहे थे। अचानक वे 'राम नाम सत्य है!' की ध्वनि सुनकर चौंक पड़े। देखते ही देखते उधर से एक अर्थी निकली। सभी ने मौन रह कर मृत व्यक्ति की आत्मा की शान्ति के लिए भगवान् से प्रार्थना की। जब अर्थी कुछ दूर चली गई तो चौधरी के मुंह से निकला, 'हे राम!'

एक किसान बिसनिया ने कहा, 'शायद छगन तेली का लड़का बंशी मरा है।'

चौधरी जैसे आसमान से गिरे, 'हैं! बंशी?'

'आज छगन रोता हुआ भटक रहा था', बिसनिया ने कहा, 'उसका बेटा बंशी कई दिनों से सख्त बीमार था। आज तो उसकी तबीयत बहुत ही खराब थी। उसके बचने की आशा नहीं रही थी। इसी से मेरा ख्याल है, शायद वही मरा होगा।'

तभी गांव का एक अन्य किसान चन्दू आया। उसने आते ही कहा, 'चौधरीजी! आज तो बिसनिया का बेटा बंशी भगवान् को प्यारा हो गया।'

चौधरी ने कहा, हां, हम भी इसी विषय में बातें कर रहे थे।'

'बेचारे बिसनिया ने बंशी की दवा-दारु में तो कोई कसर उठा नहीं रखी', चन्दू ने कहा, 'पैसा पानी की तरह बहाया, किन्तु भगवान् की मर्जी के आगे किसका बस चलता है।'

'भगवान् की मर्जी क्या, चन्दू' एक अन्य किसान जोधराज ने कहा, 'मैं तो यह कहूंगा कि बंशी की अच्छी दवा-दारु ही नहीं हुई। बिसनिया ने गांव के वैद्य का ही इलाज कराया होगा।......

'और कराता भी किसका', चन्दू ने बीच ही मे कहा, 'गांव में कोई अच्छा डॉक्टर तो है नहीं । फिर बंशी का तो रोग ही ऐसा था, जो बिना किसी अच्छे डॉक्टर की दवा के दूर नहीं हो सकता था ।'

चौधरी ने हुक्का सुलगाया और एक फूंक खीची । फिर हुक्के को चन्दू की ओर बढ़ाते हुए कहा, 'क्या करें, भई, मजबूरी है । गांव में कोई अच्छा डॉक्टर है कहां ! और जब तक डॉक्टर की कमी पूरी नही होगी तब तक लोग इसी तरह बेमौत मरते रहेंगे ।'

'इसके लिए हमें कुछ न कुछ करना ही पड़ेगा, चौधरीजी ।' रामसहाय ने कहा ।

जोधराज ने जैसे कुछ याद करके कहा, 'हां, चौधरीजी ! सुना है, चन्दू के बेटे निरंजन ने डॉक्टरी पास करली है और वह आज शाम को ही शहर से लौट रहा है '

चौपाल में खुशी की लहर-सी दौड़ गई ।

'तब तो हमारी चिन्ताएं दूर हुई समझो', चौधरी ने हुक्का गुड़गुड़ाते हुए कहा, 'निरंजन डॉक्टर की कमी को पूरी कर देगा ।'

लेकिन चन्दू ने निराश स्वर में कहा, 'यह तो आपने बिलकुल ठीक कहा चौधरी जी, किन्तु अब निरंजन शहरी हो गया है । पता नहीं, वह यहां रहना पसन्द करेगा या नही । क्योंकि शहरी आदमी गांवों मे कम ही टिक पाते हैं ।'

'यह तो ठीक है, चन्दू', चौधरी ने कहा 'शहरों का वातावरण ही ऐसा होता है । लेकिन निरंजन आखिर पैदा तो इसी गाव में हुआ है । मैं उससे अनुरोध करूंगा कि वह डॉक्टर बन कर यही रहे । इससे गांव वालों को आराम हो जाएगा । वह मेरा बहुत आदर करता है । वह मेरा कहना कभी नही टालेगा ।'

चन्दू ने कहा, 'अगर ऐसा हो जाए, तो बहुत अच्छा रहे । किन्तु मुझे विश्वास नहीं होता, क्योंकि वह जिद्दी स्वभाव का है ।'

'तू इस बात की चिन्ता मत कर, चन्दू', चौधरी ने कहा, 'मैं सब ठीक कर लूंगा ।'

अब तक सांझ घिर चुकी थी, सभी व्यक्ति स्टेशन की ओर चल दिए। कुछ देर इन्तजार करने के बाद भक-भक भक-भक करती गाड़ी आ गई। लोगों की भाग-दौड़ शुरू हो गई।

निरंजन गाड़ी से उतरा। उसने सभी व्यक्तियों के चरण छुए। कुशल-मंगल पूछने के बाद सब गांव की ओर चल दिए।

निरंजन घर पहुंचा। वह हाथ-मुंह धोकर तैयार हुआ तब तक और सब लोग बाहर बैठे हुक्का पीते रहे। बाद में सब ने निरंजन से शहर के हाल-चाल पूछे।

कुछ देर बाद वे लोग विदा हो गए।

× × ×

आज निरंजन को गांव में आए एक महीना खत्म हो चुका था। वह रात की गाड़ी से शहर के लिए विदा होना चाहता था। उसने डॉक्टर बन कर शहर में रहने का ही निश्चय किया।

चन्दू ने निरंजन को समझाते हुए कहा, 'बेटा, निरंजन ! इस गांव में कोई डाक्टर नहीं है। अगर तुम डॉक्टरी यहीं करो तो बहुत अच्छा रहे। गांव वाले तुम से आशाएं लगाए बैठे हैं।'

'यह तो बिलकुल ठीक है, बापू', निरंजन ने कहा, 'लेकिन इस गांव मे शहर का-सा वातावरण कहां, मैं गांव में डॉक्टरी करने नहीं बल्कि तुमसे मिलने आया था। फिर गांव मे डॉक्टरी इतनी चलती भी तो नहीं। यहां शहर जितनी फीस भी नहीं मिल सकती है।'

चन्दू ने कहा, 'बेटा ! फीस का लोभ मत करो। वैसे तुम्हारी डॉक्टरी यहां अच्छी चल जाएगी, क्योंकि यहां कोई अच्छा-सा डॉक्टर है भी नहीं।'

इनमें इसी प्रकार बातें हो रही थी। तभी चौधरी रामसहाय के साथ आया। निरंजन ने चौधरी को नमस्कार किया और कहा, 'चौधरी काका ! आज मैं शहर के लिए विदा हो रहा हूं।'

चौधरी को धक्का-सा लगा, 'क्यो बेटा ?'

'मैं डाक्टर बन कर शहर में ही रहूंगा, चौधरी काका,' निरंजन ने कहा, 'मैं तो यहां बस, आप लोगों से मिलने आया था।'

चौधरी ने निरंजन को समझाते हुए कहा, 'बेटा, निरंजन ! अगर तुम यहीं अपनी डाक्टरी चलाओ तो बहुत अच्छा रहे। गांव वालों को एक अच्छे डॉक्टर की कमी से बहुत दिक्कत होती है। ठीक इलाज के अभाव में कभी-कभी तो लोग मर भी जाते हैं। अगर गाव की यह कमी तुम पूरी करदो, तो सभी का उपकार होगा।'

'यह तो ठीक है, चौधरी काका, 'निरंजन ने कहा', किन्तु मैं असमर्थ हूं ! मुझे शहर का-सा वातावरण यहां नही मिल सकता।'

सभी ने निरंजन को बहुत समझाया किन्तु उसने किसी की एक न सुनी। वह शहर चला ही गया।

कुछ दिनों बाद गांव में महामारी फैली। आधे से ज्यादा गांव इसका शिकार हुआ। कई व्यक्ति रोज मरने लगे। महामारी का प्रकोप दिन व दिन बढ़ता ही गया। इसका कोई उपाय न होते देख कई व्यक्तियों ने तो गांव ही छोड़ दिया।

धीरे-धीरे सरकार ने इसकी रोक-थाम के लिए उपाय करना आरम्भ कर दिया था। लोगों को दवाइयां देकर उन्हे इस रोग से बचाने के प्रयत्न किए गए।

बिसनिया और चन्दू भी महामारी के शिकार हुए।

जिस दिन चन्दू दुनिया से विदा हुआ था उसी दिन शाम को निरजन आ गया। उसने अपने पिता की मृत्यु के विषय में सुना तो वह फूट-फूट कर रो पड़ा। चौधरी ने उसे समझाते हुए कहा, "बेटा, निरजन ! अब रोने से क्या लाभ ? जो होना था, वह हो चुका। चन्दू की तरह गांव के न जाने कितने ही व्यक्ति महामारी के शिकार हुए है। हमारे गाव मे अगर कोई डॉक्टर होता तो शायद महामारी इतने लोगों की बलि नहीं लेती। कई घरों को बर्बाद होने से बचा लिया जाता किन्तु क्या करें, भगवान् की मर्जी ही यही थी।..........हमने तुमसे कहा था

कि तुम डॉक्टर बन कर यहीं रहो, किन्तु तुमने हमारी बात नहीं मानी।..........."

सहसा निरंजन चीख पड़ा, "अपने गांव की इस बर्बादी का कारण मैं ही हूं, चौधरी काका! अगर मैं आपका कहना मान लेता तो शायद यह सब न होता। मैंने अपनी जन्मभूमि और अपने गांव वालों के साथ घोर अन्याय किया है। समर्थ होते हुए भी मैं कुछ न कर सका।"

चौधरी ने निरंजन को ढाढस बंधाया।

कुछ देर की शान्ति के बाद चौधरी ने पूछा, "लेकिन तुम आज यहां कैसे आए? तुम्हें किसी ने सूचना तो दी नहीं थी।"

निरंजन ने कहा, "मैंने इस गांव में महामारी फैलने का समाचार आज ही अखबार में पढ़ा था, चौधरी काका। इसलिए मैं आवश्यक दवाइयां लेकर चला आया। अब मैं तब तक गांव में ही रहूंगा, जब तक कि महामारी का नाम-निशान नहीं मिट जाता...........।"

"बेटा', चौधरी ने निराशा से कहा, "क्या फिर तुम शहर लौट जाओगे? क्या..........."

"हां, चौधरी काका," निरंजन ने दृढ़ता के साथ कहा, "फिर मैं शीघ्र ही अपने सारे साज सामान सहित गाव में लौट आऊंगा और यहीं अस्पताल खोल कर ग्राम वासियो की सेवा करूंगा।"

चौधरी की आंखें भर आईं, लेकिन ये प्रसन्नता के आंसू थे।